CHICAGO
RADIO

क्रांति की चिनगारियां

(भगवान श्री के उद्बोधनों से)

● अगर एक बुरे आदमी और अच्छे आदमी का मिलन होगा तो जिसकी ऊंचाई ज्यादा होगी, प्रभाव उसकी तरफ से दूसरे की तरफ बहेगा। अगर अच्छे आदमी की ऊंचाई ज्यादा होगी तो, बुरा आदमी परिवर्तित हो जायेगा और अगर अच्छे आदमी की सिर्फ बात-चीत होगी और जीवन में कोई गहराई न होगी, तो बुरा आदमी प्रभावशाली हो जायगा। प्रभाव बुरे आदमी की तरफ से अच्छे आदमी की तरफ बहने शुरू हो जायेंगे।

● पश्चिम से भारत प्रभावित हुआ है। इसका कारण यह नहीं है कि पश्चिम ने भारत को प्रभावित कर दिया है; इसका कारण यह है कि पश्चिम की, जिसको हम अनीति कहते हैं, वह अनीति भी हमारी नीति से ज्यादा बलवान और शक्तिशाली सिद्ध हुई है। पश्चिम की अनैतिकता की जितनी ऊंचाई है, हमारी नैतिकता की भी उतनी ऊंचाई नहीं है। पश्चिम के भौतिकवाद की भी एक सामर्थ्य है, हमारे अध्यात्मवाद में उतनी भी सामर्थ्य नहीं है, वह उससे भी ज्यादा निर्वीर्य, नपुंसक सिद्ध हुआ है। इसलिए प्रभाव उनकी तरफ से हमारी तरफ बहता है।

● भारत की आत्मा रिक्त और खाली है, इसलिए सारी दुनिया उसे कभी भी प्रभावित कर सकती है। जिनकी आत्माएं भरी हैं, समृद्ध हैं, वे प्रभावित नहीं होते हैं, बल्कि प्रभावित करते हैं। यह दोष देने से कुछ भी न होगा कि पश्चिम की शिक्षा और संस्कृति हमें विकृत कर रही है। गड्ढा यह कह सकता है कि पानी मुझ में भरकर मुझे भ्रष्ट कर रहा है, लेकिन गड्ढे को जानना चाहिए कि मैं गड्ढा हूं, इसलिए पानी मेरी तरफ दौड़ता है। अगर मैं पहाड़ का शिखर होता तो पानी मेरी तरफ नहीं दौड़ता।

● गुलामी से कोई मुल्क पतित नहीं होता, पतित होने से मुल्क गुलाम हो जाता है। गुलामी से कैसे कोई पतित हो सकता है ? और बिना पतित हुए कोई गुलाम कैसे हो सकता है ? क्योंकि, किसी भी कौम को मरने की

▶▶▶ शेष कव्हर तीन पर

भगवान रजनीश की सृजनात्मक
जीवन दृष्टि की मासिक
संकलन पत्रिका

अगस्त १९७२

युक्रान्द

वर्ष – ४ अंक – ३ : ४

मूल्य एक प्रति : १-०० रु.
„ वार्षिक : १२-०० रु.

युक्रान्द

अगस्त : १९७२

⧗ मानसेवी ⧗

सम्पादक : अरविन्द कुमार

उप-सम्पादक :
आलोक पाण्डे, 'आकुल' राजेन्द्र

व्यवस्थापक :
स्वामी धर्म सरस्वती

सौज० सम्पादक : कनु शेठ

अ नु क्र म णि का

— पृष्ठ —

कण-कण अमृत ३ भगवान श्री के अमृत-वचन

जीवन-प्राण प्रेम ४ भगवान श्री की बोध कथाओं से

ध्यान : एक वैज्ञानिक दृष्टि ५ संकलन : मा योग क्रांति

मृत्यु पर विजय (एक प्रवचन) ३३ संकलन : मा योग मीरा

बुद्ध और क्राइस्ट की अवतार परम्परा में भगवान रजनीश ५५ तिब्बती लामा कर्मपा से स्वामी गोविंद सिद्धार्थ की भेंट-वार्त्ता

गीत : काव्य

स्वीकृति ३२ स्वामी अमृत परमहंस

स्वत्वाधिकारी प्रकाशक : अरविन्द कुमार, ७९०, राइट—टाउन, जबलपुर.
मुद्रण : अशेष प्रिंटर्स, ७८१, राइट-टाउन, जबलपुर. ☎ 2957

● जीवन उनके लिए ही है जो जीवन के प्रति मरना जानते हैं।

● परमात्मा को पाने के लिये शुभ और अशुभ दोनों का अतिक्रमण करना होता है, क्योंकि चेतना तभी भेद से उठती है और अभेद में प्रतिष्ठित होती है।

● सारी नदियां सागर में ही क्यों गिरती हैं ? निश्चय ही सागर सबसे नीचा है, इसलिए ही। धन्य हैं वे, जो विनम्र हैं, क्योंकि परमात्मा अपनी सम्पदा से उन्हें परिपूरित कर देता है।

● मित्र, अशुभ को छोड़ा है, शुभ को भी छोड़ दो। क्योंकि जहां तक किसी पर भी पकड़ है, वहां तक अहंकार है।

जीवन-प्राण प्रेम

प्रेम को पाओ। उससे ऊपर और कुछ भी नहीं। तिरुवल्लुवर ने कहा है : "प्रेम जीवन का प्राण है। जिसमें प्रेम नहीं, वह सिर्फ मांस से घिरी हुई हड्डियों का ढेर है।"

:

प्रेम क्या है ? कल कोई पूछता था। मैंने कहा : "प्रेम जो कुछ भी हो, उसे शब्दों में कहने का उपाय नहीं, क्योंकि वह कोई विचार नहीं है। प्रेम तो अनुभूति है। उसमें डूबा जा सकता है, लेकिन उसे जाना नहीं जा सकता। प्रेम पर विचार मत करो, विचार को छोड़ो और फिर जगत् को देखो, उस शांति में जो अनुभव में आयेगा वही प्रेम है।"

और, फिर मैंने एक कहानी भी कही। किसी बाउल फकीर से एक पंडित ने पूछा : "क्या आपको शास्त्रों में वर्गीकृत प्रेम के विभिन्न रूपों का ज्ञान है ?" वह फकीर बोला : "मुझ जैसा अज्ञानी शास्त्रों की बात क्या जाने ?" इसे सुनकर उस पंडित ने शास्त्रों में वर्गीकृत प्रेम की विस्तृत चर्चा की और फिर उस फकीर का तत्संबंध में मन्तव्य जानना चाहा। वह फकीर खूब हंसने लगा और बोला : "आपकी बातें सुनकर मुझे लगता था कि जैसे कोई सुनार फूलों की बगिया में घुस आया है और वह फूलों का सौंदर्य स्वर्ण को परखने वाले पत्थर पर घिस-घिसकर कर रहा है !"

:

प्रेम को विचारो मत—जिओ। लेकिन स्मरण रहे कि उसे जीने में स्वयं को खोना पड़ता है। अहंकार अप्रेम है और जो जितना अहंकार को छोड़ देता है, वह उतना ही प्रेम से भर जाता है। अहंकार जब पूर्ण रूप से शून्य होता है, तो प्रेम हो जाता है। ऐसा प्रेम ही परमात्मा के द्वार की सीढ़ी है।

ध्यान एक वैज्ञानिक दृष्टि

● संकलन : मा योग क्रांति

● संपादन : स्वामी योग चिन्मय

दिनांक १८ जनवरी १९७१ की रात्रि षणमुखानंद हाल, बंबई में 'ध्यान मंदिर अनुदान योजना' के अन्तर्गत आयोजित एक समारोह में भगवान् श्री रजनीश द्वारा दिया गया एक प्रवचन।

मेरे प्रिय आत्मन्!

सुना है मैंने कि कोई नाव उलट गई थी। एक व्यक्ति उस नाव में बच गया और एक निर्जन द्वीप पर जा लगा। दिन, दो दिन, चार दिन, सप्ताह, दो सप्ताह उसने प्रतीक्षा की कि जिस बड़ी दुनिया का वह निवासी था वहां से कोई उसे बचाने आ जाय। फिर महीने भी बीत गये और वर्ष भी बीतने लगा! फिर किसी को आते न देखकर वह धीरे-धीरे प्रतीक्षा करना भी भूल गया। पांच वर्षों के बाद कोई जहाज वहां से गुजरा। उस एकांत निर्जन द्वीप पर उस आदमी को निकालने के लिए जहाज ने लोगों को उतारा और जब उन आदमियों ने उस खो गये आदमी को चलने को कहा तो वह विचार में पड़ गया। उन लोगों ने कहा कि आप विचार कर रहे हैं! चलना है या नहीं? तो उस आदमी ने कहा, अगर तुम्हारे साथ कुछ अखबार हों, जो तुम्हारी दुनिया की खबर लाये हों, तो मैं पिछले दिनों के कुछ अखबार देख लेना चाहता हूं। अखबार देखकर उसने कहा, तुम अपनी दुनिया सम्हालो और अखबार भी। मैं जाने से इंकार करता हूं।

बहुत हैरान हुए वे लोग। उनकी हैरानी स्वाभाविक थी। पर वह आदमी कहने लगा, इन पांच वर्षों में मैंने जिस शांति, जिस मौन और जिस आनंद को अनुभव किया, वह मैंने पूरे जीवन के पचास वर्षों में भी (तुम्हारी उस बड़ी दुनिया में) कभी अनुभव नहीं किया था। और सौभाग्य और परमात्मा की अनुकम्पा कि उस दिन तूफान में नाव उलट गई और मैं इस द्वीप पर आ लगा। यदि मैं इस द्वीप पर न लगा होता, तो शायद मुझे पता भी न चलता कि मैं किस बड़े पागलखाने में पचास वर्षों से जी रहा हूं।

हम उस बड़े पागलखाने के हिस्से हैं। उसमें ही पैदा होते हैं, उसमें ही खड़े होते हैं, उसमें ही जीते हैं और इसलिए कभी पता भी नहीं चल पाता कि जीवन में जो भी पाने योग्य है, वह सभी हमारे हाथ से चूक गया। और जिसे हम सुख कहते हैं और जिसे हम शांति कहते हैं, उसका न तो सुख से कोई सम्बन्ध है और न शांति से कोई सम्बन्ध है। और जिसे हम जीवन कहते हैं शायद वह मौत से किसी भी हालत में बेहतर नहीं है। लेकिन परिचय कठिन है। **चारों ओर एक शोर-गुल की दुनिया है, चारों ओर शब्दों का, शोर-गुल का उपद्रवग्रस्त वातावरण है।** उस सारे वातावरण में हम वे रास्ते ही भूल जाते हैं जो भीतर मौन और शांति में ले जा सकते हैं। **इस देश में और इस देश के बाहर भी कुछ लोगों ने अपने भीतर भी एकांत द्वीप की खोज कर ली है।**

न तो यह संभव है कि सभी की नावें डूब जायें, न यह संभव है कि इतने तूफान उठें, और न ही संभव है कि इतने निर्जन द्वीप मिल जायें जहां सारे लोग शांति और मौन को अनुभव कर सकें। लेकिन फिर भी **यह संभव है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने भीतर उस निर्जन द्वीप को खोज ले। ध्यान अपने ही भीतर उस उस निर्जन द्वीप की खोज का मार्ग है।** यह भी समझ लेने जैसा है।

दुनिया में सारे धर्मों में विवाद हैं। सिर्फ एक बात के सम्बन्ध में विवाद नहीं है। और वह बात ध्यान है। मुसलमान कुछ और सोचते, हिन्दू कुछ और, ईसाई कुछ और, पारसी कुछ और, बौद्ध कुछ और। उन सबके सिद्धांत बहुत भिन्न-भिन्न हैं। लेकिन एक बात के सम्बन्ध में इस पृथ्वी पर कोई भेद नहीं है। और वह यह कि **जीवन के आनंद का मार्ग ध्यान से होकर जाता है।** और परमात्मा तक अगर कोई भी कभी पहुंचा है तो ध्यान की सीढ़ी के अतिरिक्त और कोई सीढ़ी से नहीं। चाहे जीसस, चाहे बुद्ध, और चाहे मुहम्मद, और चाहे महावीर—कोई भी जिसने जीवन की परम धन्यता

को अनुभव किया है, उसने अपने ही भीतर गहरे डूब कर उस निर्जन द्वीप की खोज कर ली है।

इस ध्यान के विज्ञान के सम्बन्ध में दो-तीन बातें आपसे कहना चाहूंगा। पहली बात तो यह कि साधारणतः जब हम बोलते हैं तभी हमें पता चलता है कि हमारे भीतर कौन-से विचार चलते हैं। ध्यान का विज्ञान इस स्थिति को (जब हम बोलते हैं तभी हमें पता चलता है कि हमारे भीतर क्या था।) अत्यंत ऊपरी अवस्था मानता है। अगर एक आदमी न बोले तो हम पहचान भी न पायेंगे कि वह कौन है, क्या है। सुकरात ने किसी आदमी से मिलते वक्त कहा था कि तुम बोलो कुछ, तो मैं पहचान लूं कि तुम कौन हो। तुम न बोलो कुछ, तो पहचान मुश्किल है। इसलिए तो हम जानवरों को अलग-अलग नहीं पहचान पाते क्योंकि वे बोलते नहीं हैं। और मौन में सारी शकलें एक जैसी हो जाती हैं। शब्द हमारे बाहर प्रगट होता है तभी हमें पता चल जाता है कि हमारे भीतर क्या था।

ध्यान का विज्ञान कहता है कि यह अवस्था सबसे ऊपरी अवस्था है चित्त की। यह ऊपर की पर्त है। हम नहीं बोले होते हैं तब भी उसके पहले भीतर विचार चलता है, अन्यथा हम बोलेंगे कैसे। अगर मैं कहता हूं, 'ओम्', तो इसके पहले कि मैंने कहा, उसके पहले मेरे भी ओठों के पार और मेरे हृदय के किसी कोने में 'ओम्' का निर्माण हो जाता है।

ध्यान कहता है वह दूसरी पर्त है व्यक्तित्व के गहराई की। साधारणतः आदमी ऊपर की पर्त पर ही जीता है। उसे दूसरी पर्त का भी पता नहीं होता। उसके बोलने की दुनिया के नीचे भी एक सोचने का जगत् है, उसका भी उसे कुछ पता नहीं होता। काश! अगर हमें हमारे सोचने के जगत् का पता चल जाये तो हम बहुत हैरान हो जायें। जितना हम सोचते हैं उसका थोड़ा-सा हिस्सा वाणी में प्रकट होता है। ठीक ऐसे ही जैसे एक बर्फ के टुकड़े को हम पानी में डाल दें तो एक हिस्सा ऊपर हो जायेगा और नौ हिस्सा नीचे डूब जायेगा। हमारा भी नौ हिस्सा जीवन, विचार का, नीचे डूबा रहता है। एक हिस्सा ऊपर दिखाई पड़ता है। इसलिए अक्सर ऐसा हो जाता है कि आप क्रोध कर चुकते हैं, तब आप कहते हैं कि यह कैसे संभव हुआ! एक आदमी हत्या कर देता है, फिर पश्चात्ताप करता है। कहता है कि मैंने कैसे हत्या की! वह कहता है (इनस्पाइट आफ मी) मेरे बावजूद भी यह हो गया! मैंने तो कभी ऐसा करना ही नहीं चाहा था। उसे पता नहीं कि हत्या आकस्मिक

नहीं है। वह पहले भीतर निर्मित होती है। लेकिन वह तल गहरा है और उस तल से हमारा कोई सम्बन्ध नहीं रह गया है।

ध्यान कहता है पहले तल का नाम **बैखरी** है। दूसरे तल का नाम **मध्यमा** है और उसके नीचे भी एक तल है जिसे ध्यान का विज्ञान **पश्यन्ति** कहता है। इसके पहले कि भीतर ओठों के पार हृदय के कोने में शब्द निर्मित हो.....उससे भी पहले शब्द का निर्माण होता है। लेकिन उस तीसरे तल का तो हमें साधारणत: कोई पता नहीं होता। उससे हमारा कोई सम्बन्ध नहीं होता। दूसरे तक हम कभी-कभी झांक पाते हैं, तीसरे तक हम कभी नहीं झांक पाते।

ध्यान का विज्ञान कहता है कि पहला तल बोलने का है; दूसरा तल सोचने का है; तीसरा तल दर्शन का है। पश्यन्ति का अर्थ है देखना—जहां शब्द देखे जाते हैं। मुहम्मद कहते हैं कि मैंने कुरान देखी, सुनी नहीं। वेद के ऋषि कहते हैं कि हमने ज्ञान देखा, सुना नहीं। मूसा कहते हैं कि मेरे सामने 'टेन कमांडमेंट्स' प्रगट हुए, दिखाई पड़े, मैंने सुने नहीं। यह तीसरे तल की बात है जहां विचार दिखाई पड़ते हैं, सुनाई नहीं।

तीसरा तल भी ध्यान के हिसाब से मन का आखिरी तल नहीं। चौथा एक तल है जिसे ध्यान का विज्ञान **परा** कहता है। वहां विचार दिखाई भी नहीं पड़ते, सुनाई भी नहीं पड़ते। और जब कोई व्यक्ति देखने और सुनने से नीचे उतर जाता है तब उस चौथे तल का पता चलता है। और उस चौथे तल के पार जो जगत है वह ध्यान का जगत् है। चार हमारी पर्तें हैं, इन चारों दीवालों के भीतर हमारी आत्मा है। हम बाहर की पर्तों के भी, दीवाल के बाहर ही जीते हैं। पूरे जीवन शब्दों की पर्त के साथ जीते हैं। और स्मरण नहीं आता कि खजाने बाहर नहीं हैं; बाहर सिर्फ रास्तों की धूल है।

आनन्द बाहर नहीं है। बाहर आनन्द की धुन भी सुनाई पड़ जाये तो बहुत है। **जीवन का सब कुछ भीतर है**—भीतर, गहरे अंधेरे में दबा हुआ। ध्यान वहां तक पहुंचने का मार्ग है। **पृथ्वी पर बहुत से रास्तों से उस पांचवीं स्थिति में पहुंचने की कोशिश की जाती रही है।** और जो व्यक्ति इन चार स्थितियों को पार कर के पांचवीं गहराई में नहीं डूब पाता उस व्यक्ति को जीवन तो मिला, लेकिन जीवन को जानने की उसने कोई कोशिश नहीं की। उस व्यक्ति को खजाने तो मिले, लेकिन खजानों से वह अपरिचित ही रहा और रास्तों पर भीख मांगने में समय बिताया। उस व्यक्ति के पास वीणा तो थी

जिससे संगीत पैदा हो सकता था, लेकिन उसने उसे कभी छुआ नहीं। उसकी उंगलियों का कभी कोई स्पर्श उसकी वीणा तक नहीं पहुंचा। हम जिसे सुख कहते हैं, धर्म उसे सुख नहीं कहता है। वह सुख है भी नहीं। हम भी भली-भांति जानते हैं कि हमारा सुख करीब-करीब ऐसा है।

मुझे एक छोटी-सी कहानी याद आती है। एक आदमी अपने मित्रों के पास बैठा है—बहुत बेचैन, बहुत परेशान। और ऐसा मालूम पड़ता है कि उसने भीतर कोई बहुत कष्ट, बहुत पीड़ा को दबाया हुआ है। अंततः एक मित्र उससे पूछता है : इतने परेशान हैं! बात क्या है? सिर में दर्द है? पेट में दर्द है? उस आदमी ने कहा : नहीं, न सिर में दर्द है, न पेट में दर्द है। मेरे जूते बहुत काट रहे हैं। बहुत तंग हैं जूते। उस मित्र ने कहा कि जूतों को निकाल दें। और अगर इतने तंग जूते हैं कि परेशान कर रहे हैं, तो थोड़े ढीले जूते खरीद लें। उस आदमी ने कहा : नहीं, यह न हो सकेगा। मैं वैसे ही बहुत मुसीबत में हूं। पत्नी मेरी बीमार है और मैं जिस व्यक्ति को न चाहता था लड़की ने उससे शादी कर ली है। लड़का शराबी है, जुआरी है। और मेरी हालत दीवाले के करीब है। मैं वैसे ही बहुत दुख में हूं।

उन मित्रों ने कहा : आप पागल हैं। वैसे ही बहुत दुख में हैं तो जूते को तो बदल ही लें। उस आदमी ने कहा : इस जूते के साथ ही मेरा एक मात्र सुख रह गया है। तब तो वे बहुत चकित हुए। उन्होंने कहा : यह सुख किस प्रकार है! उस आदमी ने कहा : मैं मुसीबतों में हूं। दिन भर यह जूता मुझे काटता है और शाम को जब मैं इस जूते को उतारता हूं तो मुझे बड़ी राहत मिलती है। एक ही सुख मेरे पास बचा है। शाम जब इस जूते को घर जाकर उतारता हूं तो बड़ी 'रिलीफ', बड़ी राहत मिलती है। बस, एक ही सुख मेरे पास है। और तो दुःख ही दुःख हैं। इस जूते को मैं नहीं बदल सकता हूं। जिसे हम सुख कहते हैं वह तंग जूते से ज्यादा सुख नहीं है। 'रिलीफ', से ज्यादा सुख नहीं है। **जिसे हम सुख कहते हैं वह थोड़ी देर के लिए किसी तनाव से मुक्ति है।** नकारात्मक है, निगेटिव है।

एक आदमी थोड़ी देर के लिये शराब पी लेता है और सोचता है कि सुख में है। एक आदमी थोड़ी देर के लिए सेक्स में उतर जाता है और सोचता है कि सुख में है। एक आदमी थोड़ी देर के लिए संगीत सुन लेता है और सोचता है कि सुख में है। एक आदमी बैठकर गपशप कर लेता है, हंसी-

मजाक कर लेता है, हंस लेता है और सोचता है कि सुख में है। **ये सारे सुख तंग जूते को सांझ उतारने से भिन्न नहीं हैं।** इनका सुख से कोई भी सम्बन्ध नहीं है। सुख एक पॉजीटिव, एक विधायक स्थिति है, नकारात्मक नहीं। सुख छींक जैसा नहीं है कि आपको छींक आ जाती है और पीछे एक राहत मिलती है, क्योंकि छींक परेशान कर रही थी। सुख एक नकारात्मक चीज नहीं है लेकिन एक बोझ मन से उतर जाता है और पीछे अच्छा लगता है।

सुख एक विधायक अनुभव है लेकिन बिना ध्यान के वैसा विधायक सुख किसी को अनुभव नहीं होता। और जैसे-जैसे आदमी शिक्षित और सभ्य हुआ है, वैसे-वैसे ध्यान से दूर हुआ है। सारी सभ्यता, सारी शिक्षा आदमी को दूसरों से कैसे संबंधित हो यह तो सिखा देती है, लेकिन अपने से कैसे संबंधित हो यह नहीं सिखाती। समाज को कोई जरूरत भी नहीं है कि आप अपने से संबंधित हों। समाज चाहता है कि आप दूसरों से संबंधित हों—ठीक से, कुशलता से, तो बात पूरी हो जाती है। आप कुशलता से काम करें, बात पूरी हो जाती है।

समाज आपको एक फंक्शन (उपादेय प्रक्रिया) से ज्यादा नहीं मानता। अच्छे दूकानदार हों, अच्छे नौकर हों, अच्छे पति हों, अच्छी मां हों, अच्छी पत्नी हों, बात समाप्त हो गई। आप से समाज को कोई लेना-देना नहीं है। इसलिए समाज की सारी शिक्षा उपयोगिता की है, यूटिलिटी की है। समाज सारी शिक्षा ऐसी देता है जिससे कुछ पैदा हो। **आनन्द से कुछ भी पैदा होता नहीं दिखाई पड़ता। आनन्द कोई कमोडिटी (उपयोगी वस्तु) नहीं है जो बाजार में बिक सके।** आनन्द कोई ऐसी चीज नहीं है, जिसे रुपये में भंजाया जा सके। आनन्द कोई ऐसी चीज नहीं है जिसे बैंक बैलेन्स के रूप में जमा किया जा सके। आनंद कोई ऐसी चीज नहीं है जिसका कोई भी मूल्य हो—जिसकी समाज में कोई भी कीमत हो सके। इसलिए समाज को आनंद से कोई प्रयोजन नहीं है। और कठिनाई यही है कि **आनन्द भर एक ऐसी चीज है जो व्यक्ति के लिए मूल्यवान है,** बाकी कुछ भी मूल्यवान नहीं है। जैसे-जैसे आदमी सभ्य होता जाता है, वैसे-वैसे यूटिलिटेरियन (उपयोगितावादी) होता जाता है। वह कहता है कि सब चीज की उपयोगिता होनी चाहिए।

मेरे पास लोग आते हैं, वे कहते है : ध्यान से क्या मिलेगा ? शायद वे सोचते होंगे कि रुपये मिलें, मकान मिले, कोई पद मिले। **ध्यान से न पद**

मिलेगा, न रुपये मिलेंगे, न मकान मिलेगा। ध्यान की कोई उपयोगिता नहीं है। लेकिन जो आदमी सिर्फ उपयोगी चीजों की तलाश में घूम रहा है वह आदमी सिर्फ मौत की तलाश में घूम रहा है। जीवन की भी कोई उपयोगिता नहीं है।

जीवन में जो भी महत्वपूर्ण है वह परपजलेस (प्रयोजन मुक्त) है। जीवन में जो भी महत्वपूर्ण है उसकी बाजार में कोई कीमत नहीं है। प्रेम की कोई कीमत है बाजार में ? कोई कीमत नहीं है। आनन्द की कोई कीमत है ? कोई कीमत नहीं है। प्रार्थना की कोई कीमत है ? कोई कीमत नहीं है। ध्यान की, परमात्मा की इनकी कोई भी कीमत नहीं है। लेकिन जिस जिन्दगी में कोई अनुपयोगी (नॉन-यूटिलिटेरियन) मार्ग नहीं होता, उस जिन्दगी में **सितारों की चमक भी खो जाती है।** उस जिन्दगी में फूलों **की सुगंध** भी खो जाती है। उस जिन्दगी में **पक्षियों के गीत भी खो जाते हैं।** उस जिन्दगी में नदियों की दौड़ती हुई गति भी खो जाती है। उस जिन्दगी में कुछ भी नहीं बचता, **सिर्फ बाजार बचता है।** उस जिन्दगी में काम के सिवाय कुछ भी नहीं बचता। उस जिन्दगी में तनाव और परेशानी और चिन्ताओं के सिवाय कुछ भी नहीं बचता।

जिन्दगी चिन्ताओं का एक जोड़ नहीं है। लेकिन हमारी जिन्दगी चिन्ताओं का एक जोड़ है। **ध्यान हमारी जिन्दगी में उस डायमेन्शन, उस आयाम की खोज है जहां हम बिना प्रयोजन के सिर्फ होने मात्र में (जस्ट-बीईंग में) आनंदित होते हैं।** और जब भी हमारे जीवन में कहीं से भी सुख की कोई किरण उतरती है तो वे, वे ही क्षण होते हैं जब हम खाली, बिना काम के समुद्र के तट पर या किसी पर्वत की ओट में या आकाश में तारों के नीचे या सुबह ऊगते सूरज के साथ, आकाश में उड़ते हुए पक्षियों के पीछे या खिले हुए फूलों के पास, कभी जब हम बिना काम, बिल्कुल बेकाम, बिल्कुल व्यर्थ, बाजार में जिसकी कोई कीमत न होगी—ऐसे किसी क्षण में होते हैं तभी हमारे जीवन में सुख की थोड़ी-सी ध्वनि उतरती है। लेकिन यह आकस्मिक (एक्सिडेंटल) होती है।

ध्यान व्यवस्थित रूप से इस किरण की खोज है। कमी होती है यह ट्यूनिंग (सम-स्वरता)। विश्व के और हमारे बीच संगीत का स्वर बंध जाता है कभी, ठीक वैसे ही जैसे कभी कोई बच्चा सितार को छेड़ दे और कोई राग पैदा हो जाये आकस्मिक। **ध्यान व्यवस्थित रूप से जीवन में इस**

द्वार को बड़ा करने का नाम है, जहां से आनन्द की किरण उतरनी शुरू होती हैं, जहां से हम पदार्थ से छूटते हैं और परमात्मा से जुड़ते हैं।

मेरे देखे ध्यान से ज्यादा बिना कीमत की कोई भी चीज नहीं है। और ध्यान से ज्यादा बहुमूल्य भी कोई चीज नहीं है। और आश्चर्य की बात यह है कि यह जो ध्यान, प्रार्थना या हम कोई और नाम दें—यह इतनी कठिन बात नहीं है, जितनी लोग सोचते हैं। कठिनाई अपरिचय की है। कठिनाई न जानने के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। जैसे हमारे घर के किनारे पर ही कोई फूल खिला हो और हमने खिड़की न खोली हो। जैसे बाहर सूरज खड़ा हो और हमारे द्वार बन्द हों। जैसे खजाना सामने पड़ा हो और हम आंख बंद किये बैठे हों— ऐसी कठिनाई है। अपने ही हाथ से अपरिचय के कारण कुछ हम खोये हुए बैठे हैं। जो हमें किसी भी क्षण हो सकता है। ध्यान प्रत्येक व्यक्ति की क्षमता है। क्षमता ही नहीं प्रत्येक व्यक्ति का अधिकार भी है। परमात्मा जिस दिन व्यक्ति को पैदा करता है, ध्यान के साथ ही पैदा करता है।

बच्चों में बूढ़ों से ज्यादा ध्यान होता है। इसलिए बच्चों की जिन्दगी में बूढ़ों से ज्यादा आनन्द की पुलक होती है, इसलिए बच्चों की आंखों में कुछ अलौकिक झलक होती है। बच्चे बोलते भी हैं तो जैसे मौन भीतर से बोलता है। बूढ़े बोलते भी हैं तो मौन से बचने के लिए।

जब दो आदमी पास बैठते हैं तो जल्दी से बात शुरू कर देते हैं, ताकि कहीं मौन न घेर ले, कहीं चुप्पी बीच में न आ जाय अन्यथा कठिनाई होगी। फिर उस मौन को तोड़ना कठिन पड़ेगा। अगर पति पत्नी से थोड़ी देर न बोले तो खतरा है। पति न बोले तो खतरा है। मौन थोड़ी देर आ जाय तो डर है, क्योंकि बीच में फिर मौन को तोड़ना बहुत मुश्किल हो जायेगा। फिर उसे पिघलाना मुश्किल होगा। इसलिए हम उसे आने ही नहीं देते। हम बोल-बोलकर मौन से बचते रहते हैं। बच्चे अगर बोलते हैं तो उनसे मौन बोलता है। बूढ़े अगर बोलते हैं तो सिर्फ मौन से एक एस्केप, एक पलायन होता है। लेकिन हम बच्चों को जल्दी बूढ़े बनाने की कोशिश में लग जाते हैं। जब तक वे बच्चे रहते हैं तब तक भरोसे के योग्य नहीं रहते। जब तक वे बच्चे रहते हैं तब तक हमारी काम की दुनिया के हिस्से नहीं रहते। हम शीघ्र ही जो हमें परमात्मा से मिला है उसे तोड़ने-मोड़ने और अपने रास्तों पर लगाने में तत्पर हो जाते हैं। इसके पहले कि बच्चा जान पाये कि

क्या उसके पास था हम उसे करीब-करीब उससे अपरिचित कर देते हैं। और उससे परिचित कर देते हैं जिससे वह जिन्दगी भर परिचित रहेगा। और वह अपनी निजी संपदा से अपरिचित रह जायेगा।

ध्यान हमारा स्वभाव है। उसे हम जन्म के साथ लेकर पैदा होते हैं। और इसलिए बाद में ध्यान से परिचित होना कठिन नहीं है। ध्यान कुछ है जो हमारा है, जिसे हम केवल भूल गये हैं। जिसे विस्मरण किया है उसे हम पुनः याद कर सकते हैं। **पुनर्स्मरण से ज्यादा नहीं है ध्यान**—एक रिमेम्बरिंग। कुछ था हमारे पास जिसे हम भूल गये हैं, उसे हम पुनः याद कर सकते हैं। इसलिए कठिन नहीं है ध्यान। और प्रत्येक व्यक्ति ध्यान में प्रविष्ट हो सकता है।

ध्यान मंदिर से एक ऐसे स्थान का प्रयोजन है जहां **किसी भी धर्म का, किसी भी मार्ग का और किसी भी तरह से सोचने वाला व्यक्ति वैज्ञानिक रूप से, साइंटीफिक विधि से ध्यान से परिचित हो सके और ध्यान में प्रवेश कर सके**। इतना ही नहीं वरन् वहां वह ध्यान के मार्ग पर जो बाधायें हैं, उनसे वैज्ञानिक ढंग से परिचित हो सके। और ध्यान रहे मैं जोर देकर कह रहा हूं—"वैज्ञानिक ढंग से"। क्योंकि मंदिरों की कोई कमी नहीं है। मस्जिदों की कोई कमी नहीं है, गुरुद्वारे बहुत हैं। लेकिन **गुरुद्वारों की, मंदिरों की, मस्जिदों की भाषा और आज के आदमियों के बीच कोई सम्बन्ध नहीं रह गया है।**

ऐसा नहीं है कि मंदिर जो बोलते हैं वह गलत बोलते हैं। और ऐसा भी नहीं कि मस्जिदों में जो कहा जाता है वह गलत है। और ऐसा भी नहीं कि गुरुद्वारा जो संदेश देने बैठा है वह गलत है। वे संदेश सब ठीक हैं, लेकिन **भाषा उनकी इतनी पुरानी पड़ गयी है कि उससे आज के आदमी का कोई सम्बन्ध नहीं रहा है**। आज कोई संबंध हो भी नहीं सकता। आज के आदमी की सारी शिक्षण की व्यवस्था वैज्ञानिक है। और मंदिरों, मस्जिदों और गुरुद्वारों के सोचने के सारे ढंग पूर्व-वैज्ञानिक हैं, प्री-साइंटीफिक उनसे आज के आदमी का कहीं भी कोई तालमेल नहीं है।

ध्यान केन्द्र से या ध्यान मंदिर से मेरा प्रयोजन है वैज्ञानिक विधियों से, वैज्ञानिक व्यवस्था से आधुनिक आदमी के मन को ध्यान से न केवल बौद्धिक रूप से परिचित कराया जा सके बल्कि प्रयोगात्मक (एक्सपेरिमेंटल) रूप से

भी उसे ध्यान में प्रवेश दिया जा सके। और बौद्धिक रूप से ध्यान से परिचित होना बहुत कठिन है, प्रयोगात्मक रूप से परिचित होना बहुत सरल है।

कुछ चीजें हैं जिन्हें हम करके ही जान सकते हैं। जिन्हें हम जानकर कभी नहीं कर सकते। असल में उन्हें हम जान ही नहीं सकते जब तक कि हम कर न लें। ध्यान-मंदिर एक वैज्ञानिक व्यवस्था है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति आज भी आधुनिक भाषा एवं प्रतीकों में ध्यान के विषय में समझ पा सके और न केवल समझ पा सके बल्कि कर भी सके, और ध्यान से परिचित भी हो सके।

इसमें दो-तीन बातें खयाल में ले लेने जैसी हैं। कई बार बहुत छोटी-सी चीजें हमारे खयाल में नहीं होतीं। डॉ० पर्ल्स एक अमरीकन मनोवैज्ञानिक है जिसने एक बहुत छोटी-सी बात पर जिन्दगी भर प्रयोग किया है। एक बहुत छोटी बात, जिसका हमें खयाल भी नहीं हो सकता। उसका कहना है कि जो आदमी भोजन ठीक से चबाकर नहीं करता उस आदमी की जिंदगी में हिंसा ज्यादा होगी, वह व्हायलेंट होगा। जो आदमी जिंदगी में भोजन ठीक से चबाकर करता है उसकी हिंसा कम हो जायेगी। बहुत अजीब-सी बात मालूम होती है। चबाने से और हिंसा का क्या सम्बन्ध हो सकता है! लेकिन पर्ल्स की तीस साल की खोज यही है कि सभी जानवर हिंसा करते हैं, जब भी हिंसा करते हैं तो दांत से ही करते हैं। आदमी की भी हिंसा उसके दांतों में केंद्रित है। लेकिन आदमी ने जो भोजन विकसित किए हैं उनमें उतनी हिंसा नहीं हो पाती। इसलिए उसके दांत की हिंसा उसके पूरे शरीर में फैल जाती है।

पर्ल्स ने पिछले अनेक वर्षों में जो व्हायलेंट थे, पागल थे, जो हिंसा के बिना किये रह नहीं सकते थे उनको सिर्फ भोजन ठीक से चबाने का प्रयोग करवाया और पाया कि तीन महीने के प्रयोग में जो आदमी बिना चीजों को तोड़े-फोड़े नहीं रह सकता था, जो आदमी किसी न किसी को मारे बिना नहीं रह सकता था उस आदमी की हिंसा तिरोहित हो गई।

पर्ल्स ने फिर दांत, हिंसा और मनुष्य के व्यक्तित्व की वैज्ञानिक आधारों पर खोजबीन की और उसकी बात बहुत दूर तक सच साबित हुई। आप प्रयोग करके देखें तो खयाल में आयेगा। एक पन्द्रह दिन भोजन को इतना चबायें कि जब तक वह लिक्विड (तरल) न हो जाये तब तक उसको भीतर न ले जायें। और चौबीस घंटे आप स्मरण करें कि आपकी हिंसा में रोज फर्क पड़ता है या नहीं पड़ता है। और आप इक्कीस दिन के प्रयोग के बाद दंग हो

जायेंगे कि आपके क्रोध में फर्क हो गया है। अब क्रोध के लिए कुछ भी सीधे नहीं करना पड़ा है। करना पड़ा है कहीं और। और अगर आप सीधे क्रोध के लिए कुछ करेंगे तो कोई फर्क नहीं पड़ेगा। क्रोध दब जायेगा एक तरफ से तो दूसरी तरफ से निकलना शुरू हो जायेगा।

आपको कभी क्रोध आ जाय जोर से तो एक प्रयोग करें। अपनी टेबिल के नीचे दोनों हाथ बांधकर नाखूनों को अपनी ही हथेली में जोर से गड़ा लें फिर तीन बार मुट्ठी जोर से भीचें और खोलें और फिर क्रोध करके देखें। आप बहुत हैरान हो जायेंगे कि तीन बार मुट्ठी को खोलने और बन्द करने में ताकत खो गई जिससे आप क्रोध कर सकते थे। असल में नाखून और दांत हिंसा के केन्द्र हैं। सारे जानवर नाखून और दांतों से हिंसा कर रहे हैं। और चूंकि आदमी के पास दांत कमजोर थे, नाखून कमजोर थे इसलिए उसने हथियार बनाये जिससे उसने दांतों और नाखूनों का काम लिया। अगर हम आदमी के सारे हथियारों को देखें तो हम पायेंगे कि वे या तो दांत के विस्तार हैं या नाखून के।

ध्यान केन्द्र पर मैं इस तरह की सारी की सारी वैज्ञानिक व्यवस्था करना चाहता हूं जहां आपकी हिंसा, आपका क्रोध, आपकी चिन्ता, आपका तनाव, आपकी अनिद्रा आपके चित्त पर आने वाले विकार क्यों पैदा होते हैं, कैसे पैदा होते हैं, इसे आप समझ सकें। वे आपको पैदा करके भी बताये जा सकें और वे कैसे विदा होते हैं वह भी आपसे ही विदा करवाकर बताया जा सके।

यह नकारात्मक हिस्सा होगा ध्यान का कि **आप में जो व्यर्थ का कचरा इकट्ठा है कैसे अलग हो सके**। और फिर विधायक रूप से मैंने जो चार सीढ़ियां कहीं : बैखरी, मध्यमा, पश्यन्ति, परा—इन चार सीढ़ियों में आपको भीतर कैसे उतारा जा सके, आप इनमें भीतर कैसे उतर जायें इसकी व्यवस्था भी वहां रहेगी। **एक बार बाहर का कचरा फिक जाए तो भीतर उतर जाना बड़ी ही सरल बात है**। यह बहुत कठिन नहीं है। शायद हम इस जिंदगी में फिजूल की बातें सीखने में जितना समय नष्ट करते हैं उससे बहुत कम समय में ध्यान में गति शुरू हो जाती है।

एक आदमी नर्क जाने के लिए जितनी मेहनत उठाता है उससे बहुत कम मेहनत में स्वर्ग पा सकता है। हम क्रोध के लिए जितना श्रम करते हैं उससे बहुत कम श्रम में ध्यान में उतर सकते हैं। हम दूसरे के साथ लड़कर

जितना श्रम करते हैं उतना अगर अपने को बदलने में करें तो हम कभी के अपने भीतर परमात्मा की प्रतिमा को खोजने में सफल हो जायें । हम बाहर के रास्तों पर जितना दौड़ते हैं अगर उससे सौवां हिस्सा भी हम भीतर के रास्ते पर जायें तो हम अपने पास पहुंच जायें । और **जो आदमी अपने पास नहीं पहुंचता वह बाहर कितना ही दौड़े वह कहीं भी नहीं पहुंचेगा ।** जो अपने तक ही नहीं पहुंच पाया वह कहीं और नहीं पहुंच सकता है । और जिसे अपने भीतर शांति का कोई संगीत नहीं मिला, वह बाहर जगत के कोने-कोने में घूम आये, उसे नरक के अतिरिक्त कुछ भी मिलने वाला नहीं है । हम अपना नर्क या अपना स्वर्ग अपने साथ लेकर चलते हैं ।

इस ध्यान मंदिर को एक वैज्ञानिक व्यवस्था देनी है—साम्प्रदायिक जरा भी नहीं, किसी धर्म से बंधा हुआ जरा भी नहीं और सब धर्मों के लिए खुला हुआ इसे बनाना है । **और प्रत्येक धर्म ने ध्यान के जो अलग-अलग प्रयोग खोजे हैं, उनकी भी क्या वैज्ञानिकता है उसका भी प्रयोग करने का उस केन्द्र में खयाल है ।**

कोई एक सौ बारह विधियां हैं सारे जगत् में ध्यान की और प्रत्येक विधि अद्भुत है । और **११२ विधियों से आदमी परमात्मा तक पहुंच सकता है ।** उसमें एक दूसरे से बिल्कुल विपरीत विधियां भी हैं । इसलिए एक विधि को मानने वाला दूसरी विधि को बिल्कुल गलत कहता है, लेकिन वे ११२ विधियां सभी व्यक्तियों को ध्यान और शांति और आनन्द और सत्य तक ले जाने का मार्ग बन जाती हैं ।

इस ध्यान मंदिर में पूरी ११२ विधियों का प्रयोग करने का खयाल है । और तब पहली बार पृथ्वी पर उस तरह का प्रयोग होगा जिसमें आज तक पृथ्वी पर आविष्कृत ध्यान की क्रियाओं को एक साथ, एक जगह पर हम उपलब्ध करा सकेंगे । हम एक भी व्यक्ति को वहां खोना न चाहेंगे । वह किसी भी मार्ग से परमात्मा तक जा सके, उसी मार्ग पर ही उसे सुझाव दिये जा सकेंगे ।

अजीब-अजीब विधियां हैं ध्यान की, जिनका आपने कभी नाम भी न सुना होगा । एक दो विधि मैं आपसे कहना चाहूंगा । **तिब्बत में एक बहुत छोटी-सी विधि है : बैलेंसिंग, संतुलन** उस विधि का नाम है । कभी घर में खड़े हो जायें सुबह स्नान करके । दोनों पैर फैला लें और खयाल करें कि आपके दायें पैर पर ज्यादा जोर पड़ रहा है कि बायें पैर पर जोर पड़ रहा

है। अगर बायें पर पड़ रहा है तो फिर आहिस्ते से जोर को दायें पैर पर ले जायें। दो क्षण दायें पैर पर जोर रखें फिर बायें पर ले जायें। एक पन्द्रह दिन सिर्फ शरीर का भार बायें पर है कि दायें पर इसको बदलते रहें। और यह तिब्बती प्रयोग कहता है कि फिर इस बात का **प्रयोग करें कि दोनों पर भार न रह जाये और आप दोनों पैर के बीच में रह जायें।** और एक तीन सप्ताह का प्रयोग और जब आप बिल्कुल बीच में होंगे—भार न बायें पर होगा न दायें पर होगा—**जब आप बिल्कुल बीच में होंगे, तब आप ध्यान में प्रवेश कर जायेंगे। ठीक उसी क्षण में आप ध्यान में चले जायेंगे।**

ऊपर देखने पर लगेगा इतनी-सी आसान बात ! करेंगे तो आसान भी मालूम पड़ेगी और कठिन भी मालूम पड़ेगी। बहुत सरल मालूम पड़ती है। दो पंक्तियों में कही जा सकती है। **लेकिन लाखों लोग इस छोटे से प्रयोग के द्वारा परम आनंद को उपलब्ध हुए हैं।** जैसे ही आप बैलेंस्ड होते हैं—न बायें पर रह जाते, न दायें पर रह जाते, दोनों के बीच में रह जाते हैं वैसे ही आप पाते हैं कि वह बैलेंसिंग (संतुलन) आपकी कांशसनेस का, आपकी चेतना का भी हो गया। चेतना भी बैलेन्स्ड हो गयी, चेतना भी संतुलित हो गयी। और तब तत्काल तीर की तरह भीतर गति हो जाती है।

ऐसी एक सौ बारह विधियां हैं सारे जगत् में। **इन सारी ११२ विधियों पर विस्तृत वैज्ञानिक व्यवस्था ध्यान केन्द्र में देना चाहता हूं।** और न केवल आपको समझाया जा सके बल्कि आपको करवाया भी जा सके। **अगर एक विधि से न हो सके तो दूसरी विधि से करवाया जा सके। लेकिन हम उस मंदिर से आपको निराश न लौटने दें।** क्योंकि ११२ ये चरम विधियां हैं, इससे ज्यादा हो नहीं सकतीं। अगर एक विधि काम नहीं करती तो दूसरी करेगी। दूसरी नहीं करती तो तीसरी करेगी। और आपकी विधि तत्काल खोज ली जा सकती है कि कौन-सी विधि आप पर काम करेगी। आप पर कौन-सी विधि काम करेगी इसके खोजने का भी साइंस है, इसके खोजने का भी विज्ञान है।

यदि हम इस समय देश के बड़े-बड़े नगरों में और देश के बाहर भी ध्यान के ऐसे वैज्ञानिक मंदिर निर्मित कर सकें तो मनुष्य जाति के लिए—जो आज सर्वाधिक पीड़ा और संताप से गुजर रही है और जिसे कोई मार्ग नहीं दिखाई पड़ता है, हम एक मंगलदायी दिशा देने में सफल हो सकेंगे। इसके अतिरिक्त जो-जो हमने सोचा था कि इससे सब ठीक हो जायेगा, उससे कुछ भी ठीक नहीं हुआ है। सोचा था कि लोगों के पास भोजन ठीक होगा तो सब

ठीक हो जायेगा। आज आधी दुनिया के पास भोजन बिल्कुल ठीक है, लेकिन इससे कुछ हल नहीं हो सका है। सोचा था कि लोगों के पास कपड़े होंगे, मकान होंगे, अच्छे रास्ते होंगे, दवा होगी, चिकित्सा होगी, बीमारी कम होगी तो हम शान्त व आनंदित हो जायेंगे। आज आधी दुनिया के पास सब कुछ है, लेकिन शांति व आनंद का कहीं भी दर्शन नहीं होता है।

एक बड़ी अद्भुत घटना घटी है कि जिनके पास सब है वे ही सर्वाधिक अशान्त, बेचैन और परेशान हो गये हैं। गरीब मुल्क एक अर्थ में सौभाग्यशाली है। क्योंकि अभी उनकी आशा जीवित है। उन्हें खयाल है कि समाजवाद आयेगा। धन बढ़ेगा, धन बटेगा तो सब ठीक हो जायेगा यह आशा भी उन मुल्कों की टूट गई जहां यह सब ठीक हो गया है। अब वे गहन निराशा में खड़े हो गये हैं। **इतनी होपलेसनेस, इतनी आशारहितता कभी भी मनुष्य के इतिहास में पैदा नहीं हुई थी।**

आज अमेरिका जितना आशाहीन है उतना पृथ्वी पर कोई भी नहीं और आज अमेरिका मनुष्य के इतिहास में सर्वाधिक सम्पन्न, सर्वाधिक सुखी है। हमारे अर्थों में सब कुछ उसके पास है और फिर भी उसे ऐसा अनुभव हो रहा है कि जैसे कुछ भी पास नहीं है। इतनी आशाहीन स्थिति का कारण एक है। जो हमने सोचा था कि जिन बातों से जीवन में आनन्द मिलेगा वह सब डिसइल्यूजन्ड हो गया, वे सब भ्रम टूट गये। **और अब हमें वापिस लौटकर सुनना पड़ेगा बुद्ध को, कृष्ण को, क्राइस्ट को, मुहम्मद को** क्योंकि उन्होंने बहुत-बहुत बार, बहुत पहले यह कहा था कि अगर सब भी मिल जाये मनुष्य को लेकिन अगर स्वयं का अनुभव न मिले तो कुछ भी मिलता नहीं है। लेकिन हमें उनकी बात खयाल में नहीं आ सकी। नहीं आ सकती थी क्योंकि बात बहुत काल्पनिक मालूम पड़ती थी, बहुत यूटोपियन मालूम पड़ती थी। और जो लोग कहते थे कि धन मिल जाये, मकान मिल जाये उनकी बात बड़ी प्रेक्टिकल और व्यवहारिक मालूम पड़ती थी। इतिहास का यह बड़ा मजाक है कि जो लोग बहुत प्रेक्टिकल थे वे बहुत यूटोपियन सिद्ध हुए और जो लोग बहुत यूटोपियन थे वे ही आज पृथ्वी पर सबसे ज्यादा प्रेक्टिकल सिद्ध होने के करीब हैं।

लेकिन धर्म अब पुराने रास्तों से नहीं लौटाया जा सकता। अब धर्म नये ही रास्तों से प्रवेश करेगा। उसके नये रास्ते वैज्ञानिक और तकनीकी होंगे। अब जैसे एक आदमी हिमालय जाता था। आज भी हम सोचते हैं कि

एक आदमी हिमालय जाये तो ध्यान में जा सकता है। कभी हमने सोचा नहीं कि हिमालय किसलिए जाता था। जितना ताप कम हो जाये वातावरण में उतना भीतर प्रवेश आसान होता है। लेकिन कितने लोग हिमालय जा सकते हैं! लेकिन बम्बई में ही एक एयर कंडीशन्ड मेडिटेशन हॉल (वातानुकूलित ध्यान मंदिर) हो सकता है। अब हिमालय जाने की कोई जरूरत नहीं है। क्योंकि हिमालय पर जो ठंडक मिल सकती है, वह बम्बई में भी उपलब्ध हो सकती है। अब हिमालय पर जाना व्यर्थ की दौड़धूप है। **अब तो ठीक बंबई के बीच बाजार में भी उतनी ही शीतलता उपलब्ध हो सकती है जितनी एक योगी को हिमालय की चोटी पर उपलब्ध होती है।** उसके आस-पास भी बर्फ फैलाया जा सकता है—अगर बर्फ से ही कुछ लाभ होना है तो बर्फ फैलाया जा सकता है। अगर ऊंचाई से कुछ लाभ होता हो, जमीन के ग्रेव्हिटेशन (गुरुत्वाकर्षण) के कम होने से कुछ लाभ होता हो तो **बम्बई में भी ग्रेव्हिटेशन कम किया जा सकता है।** अगर मौन से लाभ हो सकता है तो **बम्बई में भी साउंडप्रूफ इन्तजाम किये जा सकते हैं।** और अधिकतम लोगों के लिए हिमालय की चोटी संभव नहीं है और अगर अधिक लोग पहुंच जायें तो हिमालय की बर्फ भी पिघल जायेगी। अधिक लोग वहां नहीं पहुंचे हैं तभी तक वह उपयोगी है। अधिक लोग वहां पहुंच जायें तो वहां भी इतना ही उत्ताप पहुंच जायेगा, इतनी ही गर्मी पहुंच जायेगी। एवरेस्ट पर जिस दिन जाने का रास्ता सीधा होगा उस दिन हम बस्तियां वहां भी बसा लेंगे।

आने वाले भविष्य में मनुष्य जहां है वहीं सारी टेक्नोलॉजी और साइंस का उपयोग किया जा सकता है। और वहीं सारी व्यवस्था की जा सकती है, जो कि एक योगी को बड़ी तकलीफें उठाकर व्यवस्था करना पड़ती थी। यह विज्ञान के द्वारा संभव हो गया है। एक सामान्य आदमी के लिए भी यह सब सुलभ हो सकता है।

अब विज्ञान का उपयोग करके ही, **टेक्नोलॉजी का पूरा उपयोग करके ही इस ध्यान के मंदिर को निर्मित करना है।** ध्यान का मंदिर सिर्फ इसी अर्थ में मंदिर होगा कि वह ध्यान का, परमात्मा का द्वार होगा; अन्यथा वह एक वैज्ञानिक प्रयोग शाला होगी। **इस वैज्ञानिक प्रयोग शाला में मनुष्य ने जो-जो खोजें की हैं आदमी के सम्बन्ध में उसका पूरा उपयोग किया जाना चाहिए।**

एक आदमी ध्यान करने आता है, लेकिन उसका ब्लडप्रेशर (रक्त-चाप) बढ़ा हुआ है। इस आदमी को ध्यान में ले जाना आसान नहीं है।

इसको ध्यान में ले जाना कठिन है। इसके रक्तचाप की जो अधिकता है वह उसके ध्यान में बाधा बनेगी। पुराने आदमी के पास रक्तचाप को नापने का कोई माध्यम नहीं था। लेकिन आज के ध्यान मंदिर में रक्तचाप नापने का माध्यम हो सकता है, रक्तचाप को कम करने की व्यवस्था हो सकती है। और फिर ध्यान में ले जाने की सुविधा बनाई जा सकती है। **एक बार आदमी ध्यान में चला जाये तो रक्तचाप में जाना मुश्किल हो जायेगा। लेकिन रक्तचाप में** डूबे हुए आदमी का ध्यान में जाना मुश्किल होगा।

सारी दुनिया के योगियों ने अल्प आहार पर जोर दिया है, कम खाने पर जोर दिया है। उपवास पर, अल्प-आहार पर, कम भोजन पर, सम्यक् आहार पर सारी दुनिया के योगियों ने जोर दिया है फिर भी उनके पास अल्प-आहार क्या है इसकी ठीक-ठीक जांच की कोई व्यवस्था नहीं थी, सिवाय अनुमान के। न उन्हें कैलोरीज का कुछ पता था, न उन्हें भोजन के तत्वों का कुछ पता था। इसलिए कई बार ऐसा हुआ कि अल्प-आहार के नाम पर जो चला उससे नुकसान ही पहुंचा। आज हमारे पास बहुत वैज्ञानिक व्यवस्था है कि हम जान सकें कि एक आदमी को कितनी कैलोरी भोजन की जरूरत है। **और हम यह तय कर सकते हैं कि उसकी कितनी कैलोरी कम हो जाये तो उसे ध्यान में आसानी हो जायेगी** और कितनी कैलोरी ज्यादा हो जाये तो कठिनाई हो जायेगी।

जैसे अगर ज्यादा भोजन लें तो ध्यान में कठिनाई हो जायेगी। क्योंकि ज्यादा भोजन नींद मांगता है। उसे पचाने के लिए उतनी ज्यादा नींद चाहिए। कम भोजन कम नींद मांगता है और **जितनी भीतर निद्रा कम पैदा होती हो उतना ध्यान का जागरण पैदा हो सकता है।** ध्यान तो जागरण है। एक आदमी ध्यान करने बैठता है और ज्यादा भोजन करके बैठ जाता है तो फिर कठिनाई होगी। लेकिन ज्यादा भोजन से मतलब सिर्फ पेट में ज्यादा चीजें चली जायें इससे नहीं है। क्योंकि हो सकता है एक आदमी ने बहुत शाक-सब्जी खा ली हो। पेट पर तो भोजन सम्यक् मात्रा में हो लेकिन पेट पर वजन ज्यादा न हो। और एक आदमी ने थोड़ी-सी ही मिठाई खाई हो तो पेट पर तो वजन कम है, लेकिन भोजन ज्यादा हो गया हो। और आमतौर से साधु-संन्यासी मिठाई खाते रहे, दूध पीते रहे, रबड़ी लेते रहे हैं, इस बात का बिना खयाल किये कि वह भारी सिद्ध होगा। लेकिन उसका कोई उपाय

नहीं था। उस समय कैलोरी का साफ खयाल नहीं था। आज हमारे पास सब उपाय हैं।

एक आदमी कितना सोए इस पर निर्भर करेगा कि उसकी ध्यान में गति कैसी होगी। दोनों बातें संबंधित हैं। अगर ध्यान ठीक हो जाये तो नींद ठीक हो जायेगी। लेकिन ध्यान को ठीक करना उतना आसान नहीं जितना नींद को ठीक कर लेना आसान है। **पहले नींद ठीक कर ली जाय तो ध्यान में गति बहुत आसान हो जाये।** अब लोगों के पास नींद ही नहीं है। रात ठीक से सोये नहीं, सुबह ध्यान करने बैठ गये! तो जो आदमी रात भर ठीक से सोया नहीं है वह ध्यान में सिर्फ सोयेगा। इसलिए मंदिरों में पूजा करते हुए, साधु को सुनते हुए लोग अगर सो जाते हैं तो बहुत हैरानी नहीं है। मैंने सुना है कि डॉक्टर सलाह देते हैं कि धर्म-सभा में चले जाना चाहिए अगर नींद न आती हो तो।

मैंने सुना है एक बहुत बड़ा पादरी अपने एक मित्र को बार-बार कहता था कि तुम कभी मेरा व्याख्यान सुनने आओ। पादरी नहीं माना तो एक दिन वह मित्र सुनने गया। पादरी अच्छे से अच्छा जो बोल सकता था वह बोला। दोनों बाहर जब निकलने लगे तो पादरी ने अपने मित्र से पूछा कि व्याख्यान कैसा लगा। मित्र ने कहा कि बहुत ही ताजगी देनेवाला (रिफ्रेशिंग)। पादरी के हृदय की धड़कन खुशी से बढ़ गई है। उसने कहा: कौन-सी बात तुम्हें इतनी ताजगी देने वाली लगी? उसने कहा: व्याख्यान के बाद जब मेरी नींद खुली तो मेरा मन बड़ा ताजा था। इतनी ताजगी तो जब मुझे घर नींद आती है तब भी नहीं मिलती। तो मैं जरूर आया करूंगा। तुम्हारा भाषण बहुत रिफ्रेशिंग था।

आखिर मंदिरों में, धर्म-कथाओं में आदमी को नींद क्यों आ जाती है? आखिर बात क्या है! बोर्डम (ऊब) पैदा हो जाये तो नींद आ जाती है। कोई चीज उबाने लगे तो नींद आ जाती है। और नींद की कमी हो तो जल्दी ही कोई चीज उबाने लगती है।

जिनको नींद नहीं आती, वे मेरे पास आते हैं। वे कहते हैं कि हमें नींद नहीं आती। ध्यान से शायद नींद आ जाय? उन्हें पता नहीं कि **ध्यान से नींद जरूर ठीक हो जायेगी, लेकिन नींद का ठीक होना ध्यान में जाने के पहले बहुत जरूरी है।** अन्यथा ध्यान में जाना मुश्किल हो जायगा। कठिन इसलिए हो जायगा कि **चित्त की पहली जरूरत नींद की है।** और जैसे ही विश्राम

मिला, चित्त सो जायगा। और ध्यान में जरूरत है **विश्राम में भी जागे हुए** होने की—रिलेक्स्ड एण्ड अवेयर। एक तरफ कोई ध्यान में प्रवेश कर सकता है। और नींद का नियम यह है कि यहां हम विश्राम में हुए बाहर और भीतर नींद आ गई। रिलेक्स हुए कि नींद आ गई। तो ध्यान में अक्सर लोग सो जायेंगे।

अब यह सारी व्यवस्था आज की जा सकती है : अनिद्रा दूर की जा सकती है। नींद नापी जा सकती है। सपने नापे जा सकते हैं कि कितने सपने आपको आ रहे हैं। आपको हो नहीं पता होता कितने सपने आ रहे हैं। कैसे सपने आ रहे हैं।

कल ही एक साधिका मेरे पास थी। ध्यान करना है उसे। मैंने उसके सपनों के बाबत पूछा। उसने कहा कि सपनों से क्या मतलब आपको! मुझे ध्यान करना है। मैंने उससे कहा, मुझे पूछना बहुत जरूरी है क्योंकि **सपने ही मुझे बतायेंगे कि तुम्हें ध्यान करना है या कुछ और करना है।** उसने कहा कि सपने में तो मुझे सिर्फ काम-वासना के और हिंसा के, आग लगा देने के (इस तरह के) सपने आते हैं। तो मैंने कहा, "वही तुम्हारा चित्त करना चाहता है। अभी ध्यान मुश्किल पड़ेगा। **पहले तो तुम्हारे सपनों को शुद्ध करना पड़ेगा।**" जिस व्यक्ति को स्वयं को शुद्ध करना है वह अगर अपने सपनों को भी शुद्ध न कर पाये तो स्वयं को शुद्ध न कर पायेगा। सपने जैसी साधारण चीज भी अशुद्ध हो तो उसकी सत्ता (आत्मा) शांत हो जाये यह अभी बहुत मुश्किल है। लेकिन आज से पहले सपनों के जांचने की कोई सुविधा न थी।

इस ध्यान केन्द्र में सपनों के जांचने की पूरी व्यवस्था करना चाहता हूं। अब तो इसकी पूरी वैज्ञानिक सुविधा है। जैसे आपका कार्डियोग्राफ लिया जाता है, वैसे रात में आपके सपने का ग्राफ बनाया जा सकता है कि आपने कितनी देर सपने देखे, किस प्रकार के सपने देखे। सपने व्हायलेंट (हिंसक) थे या नान व्हायलेंट (अहिंसक) थे, सेक्सुअल (कामुक) थे या नहीं थे, **सपने किस तरह के थे इसकी काफी जानकारी ग्राफ दे देता है।** कितने सपने देखे रात भर यह भी ग्राफ बता देगा। क्योंकि यह जानकर आप हैरान होंगे कि सपनों के सम्बन्ध में जितनी जानकारी बढ़ी है उतना ही प्रतीत हुआ है कि चित्त के भीतर भी वेव्ज़ (तरंगें) हैं। सपना चलता है तो तरंगें और तरह की होती हैं, जब सपना बंद होता है तो और ही तरह की तरंगें मस्तिष्क में होती हैं। और बड़े आश्चर्य की बात है कि गहरी नींद में जो तरंगों की स्थिति होती है वही स्थिति ध्यान में भी तरंगों की होती है।

ध्यान में जब कोई व्यक्ति होता है तो उसके मस्तिष्क की तरंगें वैसी ही होती हैं जैसी तरंगें गहरी निद्रा में होती हैं। और जब कोई व्यक्ति सपने में होता है तो तरंगें वैसी ही होती हैं जैसे जब कोई व्यक्ति चिन्ता में होता है। **चिन्ता और सपनों का जोड़ है। गहरी निद्रा और ध्यान का जोड़ है।**

यह सारी वैज्ञानिक व्यवस्था इस ध्यान मंदिर में करने का खयाल है। और प्रत्येक व्यक्ति को वैज्ञानिक विधि से सहायता पहुंचाई जा सके यह दृष्टि है। और मेरे देखे **आज मनुष्य को ध्यान की जितनी जरूरत है उतनी किसी और चीज की जरूरत नहीं है,** क्योंकि आज मनुष्य जितना अशांत है उतना मनुष्य अशांत कभी भी नहीं था।

ये थोड़ी-सी बातें मैंने कहीं, इन्हें सोचना विचारना। इन्हें मान लेने की कोई जरूरत नहीं है। और यह ध्यान मंदिर विश्वास करने वालों के लिए नहीं होगा, प्रयोग करने वालों के लिए होगा। विश्वास करने वालों के लिए वैसे भी अब कहीं नहीं है। सिर्फ कहते हुए दिखाई पड़ते हैं लोग, कहीं कोई विश्वास करने वाला आदमी अब नहीं है! हर आदमी के रथ पर शल्य बैठा हुआ है। एक छोटी-सी कहानी और बात पूरी कर दूं।

कर्ण ने महाभारत के युद्ध में जिस आदमी को सारथी चुना वही उसकी हार का कारण बना। कर्ण ने जिस आदमी को सारथी चुना उसका नाम था शल्य। शल्य का अर्थ होता है—संदेह, शंका, संशय। अब कर्ण का अर्थ तो आप जानते ही हैं। कर्ण का अर्थ होता है कान। **सब शंकायें कान से प्रवेश करती हैं।** शल्य को कर्ण ने सारथी चुन लिया और अर्जुन ने कृष्ण को सारथी चुना। सारे युद्ध के लिए निर्णायक (डिसीसिव) यही बात हो गई। क्योंकि वह शल्य जो था उसका नाम शल्य इसीलिए था कि वह बड़ा शंकालु आदमी था। कर्ण बहुत शक्तिशाली आदमी था। जो लोग जानते हैं और महाभारत जिनके सामने हुआ उन सबका खयाल था कि कर्ण से अर्जुन जीत न सकेगा। कर्ण महा-शक्तिशाली था। कर्ण के पीछे सूर्य की शक्ति थी, अर्जुन उससे जीत न पाता। लेकिन अंततः युद्ध में हुआ ऐसा कि अर्जुन जीता और कर्ण हारा। और जो जानते हैं वे कहते हैं कि गलत सारथी को चुनने के कारण ही कर्ण हारा। क्योंकि वह जो शल्य था वह पूरे वक्त कर्ण को कहता रहा: अरे, तू क्या जीतेगा अर्जुन से! शल्य पूरे वक्त उससे यही कहता रहा। कर्ण धनुष बाण खींच रहा है और शल्य, उसका सारथी कह रहा है: क्यों मेहनत कर रहा है? तू क्या जीतेगा अर्जुन से! तेरी जीत बहुत मुश्किल है। एक यह था

सारथी और एक कृष्ण था सारथी अर्जुन के पास कि अर्जुन गांडीव छोड़कर बैठ गया और कृष्ण ने पूरी गीता कही कि वह आदमी लड़े, क्योंकि कृष्ण ने कहा कि जो होना है वह पहले से निश्चित है, तुझे कुछ करना ही नहीं है। तू सिर्फ निमित्त है। यह जो शल्य मिल गया कर्ण को, यह जो शंका मिल गई कर्ण के मन को, वही उसे डुबाने वाली हो गई।

कोई पहचानता हो, न पहचानता हो संदेह आज हर आदमी के साथ खड़ा है। इसलिए जो विश्वास संदेह के आधार में प्रचारित किये गये थे वे अब काम के नहीं हैं। **अब तो पहले शल्य की हत्या करनी पड़ेगी, तब कहीं व्यक्ति के भीतर की चेतना पर कोई परिणाम लाया जा सकता है। और इस शल्य की हत्या बिना विज्ञान के नहीं हो सकती।** इसलिए मैं इस ध्यान केन्द्र में आपके शल्य की हत्या विज्ञान के द्वारा करना चाहता हूं।

विश्वास के माध्यम से अब ध्यान में प्रवेश नहीं होगा। मेरे यह कहने से कि आप मान लें, आप मानेंगे नहीं। मानने का अब कोई उपाय नहीं रहा। वह वक्त आ गया, वह समय बीत गया है जब लोग मान लेते थे। अब वह समय कभी भी नहीं लौट सकता। मनुष्य जाति का बचपन सदा के लिए खो गया है। अब आदमी प्रौढ़ है। और इस प्रौढ़ आदमी के पास जो संदेह है उस संदेह को अगर हम वैज्ञानिक प्रक्रिया से नष्ट न कर सके तो मनुष्य की जिन्दगी में हम कोई भी क्रांति लाने में सफल नहीं हो सकते।

इसलिए इस ध्यान मंदिर को मैं एक वैज्ञानिक मंदिर कहता हूं जहां हम धर्म को, ध्यान को वैज्ञानिक मार्ग से मनुष्य तक पहुंचाने का प्रयास कर सकते हैं।

●

जो जानते हैं वे राह के अवरोधों को सीढ़ियां बना लेते हैं और जो नहीं जानते उनके लिए सीढ़ियां भी अवरोध बन जाती हैं।

ध्यान–मंदिर

इधर मेरे मन में यह निरंतर चलता है कि देश के सारे प्रमुख नगरों में ध्यान केन्द्र हों। यहां हम इसकी चिंता नहीं कर रहे हैं कि क्या ठीक है, यहां हम इसकी चिंता कर रहे हैं कि कुछ लोग क्लेरिटी (स्पष्टता) को उपलब्ध हो रहे हैं और उनका मन शांत हो रहा है और चीजों को देखना शुरू कर रहे हैं कि चीजें कैसी हैं। न उनका पक्षपात काम कर रहा है, न उनके अपने कोई पूर्वाग्रह काम कर रहे हैं। उनके पास सिर्फ ठीक-ठीक देखने वाली दूरबीन है, उससे वे देखना शुरू कर रहे हैं। अगर मुल्क के सारे बड़े नगरों में हम थोड़ी छोटी-सी जमात भी चीजों को **ठीक देखने वाले** लोगों की पैदा कर सकें तो **इस संक्रमण काल में** उसके **बहुमूल्य** उपयोग होंगे। और मैं मानता हूं शायद वह सर्वाधिक मूल्यवान बात सिद्ध हो—इसलिए कि ठीक शांत चित्त के लिए हम हवा, भूमि और व्यवस्था दे सकें। इस व्यवस्था को देने में बहुत-सी बातें होंगी। जैसा **ध्यान केन्द्र** के लिए कहा, **मैडिटेशन हॉल** के लिए कहा। यह बहुत जरूरी है कि सारे बड़े नगरों में ऐसे भवन हों जो न हिन्दू के हों, न मुसलमान के हों, न ईसाई के—जो सभी मनुष्यों के लिए हों और जो भी वहां शांत होना चाहता है उसके लिए हों। उन भवनों में शांति के लिए सब तरह की व्यवस्था की जा सकती है। छोटे बच्चों के लिए वहां अलग व्यवस्था की जा सकती है, जो **छोटे बच्चों को ध्यान** में ले जाने में सहयोगी हो सके। और भी हजार उपाय किए जा सकते हैं।

अभी पूना में जिस घर में मेहमान था वहां वे दो पेंटिंग काफी खर्च करके ले आये थे। पेन्टिंग अच्छी भी थीं। उन्होंने मुझसे पूछा कि आप क्या कहते हैं ? मैंने कहा, मैं कुछ नहीं कहूंगा। तुम इस पेन्टिंग के पास आधे घंटे बैठकर आधे घंटे देखते रहो और तब तुम्हारा मन कैसा होता, वह मुझे बता दो। आधा घंटा तो बहुत दूर था, पांच मिनिट भी उस पेन्टिंग को गौर से देखने में आपका सिर घूमने लगेगा और ऐसा लगेगा कि आप पागलखाने में

हैं। आज कोई पश्चिम की पेन्टिंग उठाकर देखे तो उसे ऐसा लगेगा कि वह जरूर रुग्ण चित्त से पैदा हुई है। अगर पिकासो की एक पेन्टिंग पर थोड़ी देर कोई ध्यान करे तो वह पागल हो सकता है, शांत नहीं। लेकिन अगर बुद्ध की मूर्ति पर कोई पांच मिनिट बैठकर ध्यान करे, तो वह पागल भी हो तो शांत होकर लौटेगा।

मैं चाहता हूं कि ऐसे हाल होने चाहिए सारे मुल्क में, जिसमें **दरवेश फकीरों के नृत्य हों**, नाच तो हम रहे हैं और सारी दुनिया नाच रही है और दुनिया को नाचने से नहीं रोका जा सकता। जो कौम नाचने से रुकेगी उसको भारी नुकसान होने शुरू हो जायेंगे। लेकिन नाच ऐसा हो सकता है कि नाचने वाला नाचने में शांत हो, और ऐसा भी हो सकता है कि नाचने में अशांत हो। ऐसा नाच हो सकता है जो कामुकता से भर दे और ऐसा नाच हो सकता है जो कामुकता के बाहर कर दे। देखने वाला भी देखते-देखते कामुक हो सकता है। यानी नाच आपके भीतर कुछ करेगा। जो भी आप देख रहे हैं वह आपके भीतर कुछ करेगा। **दरवेश फकीरों के नृत्य हैं, अगर उनको कोई आधा घंटे तक देखता रहे, तो पायेगा कि सारे मन की चिन्ता विलीन हो गई है**; क्योंकि वह जो गति है वह इतने वैज्ञानिक हिसाब से निर्मित की गई है मानो आपके मन में थपकी देती हो, शान्त करती हो।

'मैडिटेशन हॉल' बहुत अर्थ रखता है। वहां हम इस तरह के **चित्रों की व्यवस्था** करें जिन्हें देखकर मन शांत हो, स्वस्थ हो; इस तरह के **नृत्यों की व्यवस्था** करें जिन्हें देखकर मन शांत होता हो, स्वस्थ होता हो। उस तरह के **गीत की, संगीत की व्यवस्था** करें, उस तरह का शिक्षक वहां पैदा हो, उस तरह का बच्चा भी वहां हो, बूढ़ा भी वहां हो, पति भी हो, पत्नी भी हो। **जीवन के सारे पहलुओं को हम वहां छूना शुरू करें**। पुरानी दुनिया ने भी बहुत से ध्यान भवन पैदा किये, लेकिन वे सब पलायनवादी थे। अगर कोई आदमी मंदिर में जाता हो तो वह जिन्दगी से भागना शुरू हो जायगा। **मैं ऐसे मंदिर चाहता हूं जो जिन्दगी में और गहराई में ले जाते हों, जिन्दगी से भागते न हों**। ऐसा केन्द्र जहां जीवन की सब दिशाओं को छूने के लिए और सब दिशाओं से काम करने के लिए और मनुष्य को सब तरफ शांति में डुबकी लगाने के लिये हम कोई व्यवस्था दे सकें। वह व्यवस्था दी जा सकती है उसमें कोई बहुत कठिनाई नहीं है। जिस तरकीब से हमने आदमी को अशांत किया है, वह भी व्यवस्था है।

तो ध्यान केन्द्र चाहिए। पैसे की बात मैं नहीं जानता। इतना मैं जानता हूं कि इस तरह की व्यवस्था अगर जुटा पाते हैं आप, तो आप इस मुल्क की आने वाली समस्त पीढ़ियों के लिए कुछ काम कर सकेंगे, अपने लिए भी।

कुछ मूल्यवान चीजें हैं जिनका स्थायी परिणाम देश की चेतना पर हो हो सकता है। जैसे धर्म के नाम पर हमारे पास जो साहित्य है बिल्कुल कचरा है। उस साहित्य की वजह से, जिसमें थोड़ी भी बुद्धि है वह धार्मिक नहीं हो पायेगा। उस साहित्य को पढ़ने के लिए बुद्धिहीनता बहुत अनिवार्य आवश्यकता है। **ऐसा साहित्य चाहिए जो मुल्क की प्रतिभा को छुए और स्पर्श करे**, मुल्क की प्रतिभा जिसमें पाये कि कुछ रस हो सकता है। उस साहित्य के लिए भी ऐसे केन्द्र प्रचार और विस्तार के आधार बन सकते हैं।

अब हमारे पास बहुत नये साधन हैं जो कभी भी न थे, लेकिन उन साधनों का प्रयोग भी हम मनुष्य के मंगल के लिए नहीं कर पा रहे हैं। बुद्ध के पास कोई उपाय नहीं था सिवाय इसके कि वे पैदल घूमें चालीस साल। इतनी बड़ी दुनिया थी, लेकिन चालीस साल पैदल बुद्ध घूमे तो भी बिहार के बाहर न जा सके। सिर्फ एक दफा बनारस तक गये। **बुद्ध के पास उपाय नहीं थे।** अगर मेरे जैसे आदमी को भी बुद्ध जैसे ही भटकना पड़े तो ढाई हजार साल बेकार गये। जब यह मामला है, तो बुद्ध जितना काम कर सके उससे ज्यादा मैं भी नहीं कर सकूंगा। लेकिन ढाई हजार साल में जो सारी टेक्नोलॉजी विकसित हुई है उसका क्या मतलब है? उसका मतलब है कि **फिल्म** ऐसी हो सकती है कि जिस गांव में मैं नहीं गया हूं वहां भी मेरी बात पहुंच जाय। फिल्म ऐसी हो सकती है कि जिस गांव में हम नृत्य की वह व्यवस्था न कर सकें जो हमने बम्बई में की है, तो फिल्म उस नृत्य को वहां पहुंचा देगी। जरूरी नहीं है कि हम हर गांव में पेन्टिंग्स पहुंचा सकें, लेकिन बम्बई में जो हमने पेन्टिंग्स लगाये हैं अपने ध्यान कक्ष में, उनको पूरा मुल्क फिल्म के जरिये देख ले; पूरा मुल्क ही नहीं, पूरी दुनिया भी संबंधित हो जाय। **रेडियो** का माध्यम है, **टेलिविजन** का माध्यम है। अब हमारे पास ऐसे माध्यम हैं जिनका कि पुराना जगत् उपयोग ही नहीं कर सकता था। उसके पास नहीं थे, हमारे पास हैं। हम भी उपयोग कर रहे हैं लेकिन मंगल के लिए उपयोग नहीं हो रहा है, अमंगल के लिए उपयोग हो रहा है।

मुझे मिलते हैं लोग और कहते हैं, सिनेमा बन्द करो। बन्द करने का सवाल नहीं है। जो माध्यम जगत् में आ गया है वह बन्द नहीं होगा। इस–

लिए सवाल बन्द करने का नहीं है, सवाल उसके उपयोग का है कि उसका कैसे उपयोग हो। **सिनेमा जैसी शक्तिशाली चीज का एकदम ही गलत उपयोग हो** रहा है। हमने कहावत सुनी है कि जब भी कोई आविष्कार होता है शैतान सबसे पहले उस पर कब्जा कर लेता है और जिनको हम अच्छे लोग कहते हैं, वे खड़े देखते रहते हैं। वे लोग चिल्ला रहे हैं कि बड़ा बुरा हुआ जा रहा है। लेकिन तुमको कौन रोक रहा है कि तुम उस पर कब्जा मत कर लो। लेकिन वे साधु सम्मेलन करके तय करते रहेंगे कि रद्दी पोस्टर नहीं लगने चाहिए। लेकिन अच्छा पोस्टर लगाने से तुमको कौन रोक रहा है ? तुम इतना **अच्छा पोस्टर** क्यों नहीं लगा पा रहे हो कि रद्दी पोस्टर अपने आप उखड़ जायँ और उसे कोई देखने न आये। लेकिन उनकी फिक्र है कि रद्दी पोस्टर नहीं होने चाहिए। वे चिल्लायेंगे कि रद्दी फिल्म नहीं होना चाहिए। लेकिन तुम्हें **अच्छी फिल्म** बनाने से कौन रोक रहा है ? लेकिन वह तुम्हारी कल्पना में नहीं आ रहा।

हम सोच ही नहीं सकते कि बुद्ध जैसा आदमी अगर फिल्म में खड़ा किया सके तो उसके क्या परिणाम होंगे। अगर बुद्ध बोल सकते हैं, चल सकते हैं तो बुद्ध का बोलना-चलना हम फिल्म के द्वारा क्यों नहीं देख सकते ? सारा मुल्क देख सकता है। लेकिन बुरा आदमी सबसे पहले कब्जा कर लेता है और अच्छा आदमी सिर्फ चिल्लाता रहता है। अच्छा आदमी सदा से नपुंसक है। वह करता कभी कुछ नहीं है, वह इतना ही कहता है कि बुरा हो रहा है। मेरी समझ में **अच्छे आदमी को वीर्यशाली बनाने की जरूरत है**। बुराई से जो लड़ाई है वह बातचीत से नहीं हो सकती। जिन-जिन माध्यमों का बुरा उपयोग हो रहा है उन-उन माध्यमों का भला उपयाग करना चाहिए।

अभी मैं हैरान हूं। अब मैं जाऊंगा, एक-एक गांव घूमूंगा। एक-एक गांव में अगर मैं जाऊं और दस हजार लोग भी मुझे सुनें तो यह समुद्र में रंग घोलने जैसा है। मैं जिन्दगी भर मेहनत भी करूं तो भी इस मुल्क के पचास करोड़ लोगों के आमने-सामने नहीं हो सकता हूं। अब कोई वजह नहीं है कि आमने-सामने क्यों न हो सकूं ? **नवीनतम टेक्नोलॉजी का, साइंस का, धर्म कैसे उपयोग करे इस सम्बन्ध में न केवल चिंतन बल्कि व्यवस्था जुटाने की** बात है। तो पन्द्रह लाख तो बहुत छोटी बात है, उसे तो शुरू मानकर चलना चाहिए, किन्तु अगर इसका उपयाग हो सके तो बड़ा क्रांतिकारी काम हो सकता है।

बच्चे फिल्म देख रहे हैं, उनको आप मना कर रहे हैं। मैं नहीं मानता कि उनको मना करने की जरूरत है। उनको जरूर फिल्म दिखानी चाहिए। कोई कारण नहीं कि ऐसी फिल्म बच्चे क्यों नहीं देखें जो उनकी जिन्दगी में रोशनी बनकर आये। आ सकती है। ऐसा गीत क्यों न गायें, जरूर वे गा सकते हैं। मैं मानता हूं कि बच्चों को नर्तक होना ही चाहिए क्योंकि जो बच्चा नाच नहीं सकता वह बूढ़ा हो गया। मगर हम चिल्लायेंगे कि यह नाच ठीक नहीं है। लेकिन ठीक नाच कहां है ? या तो नाच है ही नहीं, या गलत नाच है। उन दोनों में तो गलत नाच ही चुना जायगा। **ठीक नाच कहां है ? वह ठीक नाच सामने ले आइए, गलत नाच अपने आप विदा होने लगेगा।**

मेरा मानना है कि भलाई अभी तक आकर्षक नहीं हो पायी, अभी भी बुराई आकर्षक है। यह आश्चर्य की बात है कि बुराई इतनी आकर्षक है और भलाई में कोई आकर्षण नहीं है ! आदमी जब मरने लगता है तब वह मंदिर की तरफ जाता है अन्यथा वह नहीं जाता है। हां, एक फिल्म टॉकीज 'मराठा मंदिर' है, वहां जाता हो, तो बात अलग है। जब वह थकने लगता है और हारने लगता है तब कहीं धर्म उसको आकर्षक मालूम पड़ता है। यानी अब तक सारा धर्म मरे हुए आदमियों को आकर्षित करता है, जिन्दा आदमी को नहीं आकर्षित करता है। **तो मैं ऐसे केन्द्र बनाना चाहता हूं जहां से हम जीवन की सब विधाओं को स्पर्श करने लगें, तो हम दस पन्द्रह वर्षों में एक नये समाज के जन्म के लिए कुछ नये आधार रख सकते हैं।** इधर दस वर्षों से मैं निरंतर बोल रहा हूं, सब तरह के लोग मेरी नजर में हैं। कौन क्या-क्या कर सकते हैं, वह सब मेरे ध्यान में है।

मैं एक जंगल में ठहरा हुआ था। एक मूर्तिकार जो कभी बहुत प्रसिद्ध था लेकिन दुनिया से परेशान होकर, जाकर जंगल में रहने लगा। वह इस समय दुनिया में दस पांच अच्छे मूर्तिकारों में है लेकिन उसके पास मूर्ति बनाने के लिए पैसे नहीं हैं। उसके पास सीमेंट नहीं है, कांक्रीट नहीं है जिससे वह मूर्ति बना ले। उसने मुझसे कहा, मैं जिस तालाब के पास हूं उसके चारों तरफ ऐसी मूर्तियां बना देना चाहता हूं और उसने अपने सारे नक्शे मुझे बताए। वह इतना अद्‌भुत है लेकिन उसके पास पैसे नहीं हैं। मैंने उससे कहा, जब मैं कोई केन्द्र खड़ा करूं, तुम आ जाओ और उसके चारों तरफ ऐसी मूर्तियां फैला दो। उसने कहा, कि सारी जिन्दगी वहां लगा दूंगा क्योंकि मुझे और कोई काम नहीं है। मुझे रोटी मिल जाय उसके बाद मुझसे कोई काम ले सारी जिंदगी।

मूर्तिकार हैं, संगीतज्ञ हैं, लेकिन वही संगीत बाजार में बिकेगा जो रद्दी होगा, क्योंकि रद्दी आदमी ही सिर्फ खरीदने वाला है। धीरे-धीरे वह संगीतज्ञ रद्दी संगीत बेचने लगेगा क्योंकि बाजार में मूल्य उसका है। हमारे पास एक ऐसी व्यवस्था चाहिए, मुल्क के प्रत्येक बड़े नगर में जहां हम श्रेष्ठतम को पनपने के लिए, खिलने के लिए मौका दे सकें; चाहे जितनी छोटी मात्रा में हम श्रेष्ठ को जन्म दे सकें।

ध्यान बहुत सी चीजों का इकट्ठा जोड़ है। ध्यान कोई एक चीज नहीं है कि एक आदमी चौबीस घंटे कुछ भी रहे और बस एक दफा ध्यान में चला जाय। मेरी समझ है कि अगर किसी आदमी को ध्यान में जाना है तो उसके घर की दीवालों में रंग की बदलाहट होनी चाहिए। क्योंकि दीवालों का रंग ऐसा हो सकता है जो कभी ध्यान में जाने ही न दे। अगर आपने लाल, काले और पीले रंग से दीवालें पोत डालीं तो उनके भीतर आप पांच मिनट बैठकर आंख बन्द करेंगे और बेचैन हो जायेंगे। इसलिए कैसे कपड़े पहनेंगे, यह भी अर्थपूर्ण है, क्योंकि हम जीते बहुत शरीर के तल पर हैं। आत्मा वगैरह की तो बात होती है, जीते शरीर के तल पर हैं।

ये जो केन्द्र होंगे ये जीवन की सब दिशाओं में खोज करें, अन्वेषण करें— कपड़े कैसे हों, दीवाल के रंग कैसे हों, मकान कैसा हो, मकान के पास दरख्त कैसे हों ? सारी चीजों के संबंध में स्पर्श करने की जरूरत है। और जब इन सब पर स्पर्श हो तो मैं जानता हूं कि ध्यान इतनी सरल चीज है जितनी कोई और चीज सरल नहीं है। शायद उसे अलग से करने की जरूरत न रह जाय। अगर भोजन कैसा हो, कपड़े कैसे हों, मकान कैसा हो, बगीचा कैसा हो, उठते लोग कैसे हों, बैठते लोग कैसे हों, बात कैसे करते हों—अगर इन सारी बातों के संबंध में एक बात स्मरण रख ली जाय कि कौन सी बात शांति की तरफ ले जाने वाली है तो जरूरी नहीं कि उस आदमी को और अलग से ध्यान करने जाना पड़े। यह सब ही उसके भीतर ध्यान का सूत्र बन जायगा। अभी तो मैं जिनके ध्यान की बात कर रहा हूं वे बिल्कुल ही गलत लोग हैं, क्योंकि वे जिस दुनिया के हैं उनसे इसका कोई संबंध नहीं है। लेकिन उनको सुझाव देने का भी सवाल है—वह भी तो नहीं है उनके पास। वह कर भी क्या सकते हैं !

एक पूरा दर्शन तो है मेरे दिमाग में। जिनको भी ठीक लगता हो वे थोड़ी ताकत लगायें तो पूरा हो जाय। मुझे कोई परेशानी नहीं होगी।

जितना मैं कर सकता हूं, करता चला जाता हूं, उसमें कोई अन्तर नहीं है। अब मेरे खयाल से कुछ लोग हैं जिनको मैं कहीं बिठा सकता हूं जो कि बड़े काम के हो सकते हैं। लेकिन मैं कहीं बैठ नहीं सकता। मेरा कहीं बैठना तो महंगी बात है। मैं चलता रहूंगा। पर कुछ लोगों को कहीं बिठाया जा सकता है जो कि बड़े काम के सिद्ध हो जायं, पर उनके बिठाने के लिए भी कोई उपाय और व्यवस्था चाहिए। वह आपको सोचना चाहिए और एक बंबई से शुरुआत करें। बंबई में एक माडल की तरह खड़ा कर लें, फिर हम देश के और नगरों में उसकी चिन्ता लें।

जो भी महत्वपूर्ण है वह बहुत धीरे-धीरे प्रभावी होता है, वक्त लेता है। मौसमी फूल हम बोते हैं तो वह महीने भर बाद फूल भी देने लगते हैं और दो महीने बाद समाप्त हो जाते हैं। यह प्रक्रिया इतनी आसान नहीं है कि आज हो जायगी। इसलिए मुझे लगता है कि अक्सर इसीलिए काम नहीं हो पाता, क्योंकि **हमारी आकांक्षाएं बहुत मौसमी होती हैं**। हम चाहते हैं कि अभी हो जायं। वह अभी नही हो पातीं तो फिर हम थक कर लौट जाते हैं कि अभी नहीं हो सकतीं। यह तो लम्बी यात्रा है और ऐसी यात्रा है जिसका अन्त कहीं भी नहीं होता है। हम उसे सिर्फ धक्का दे जाते हैं और समाप्त हो जाते हैं। फिर कोई और धक्का दे जाता है और समाप्त हो जाता है। यात्रा चलती रहती है, **यात्रा अनन्त है**। पर एक ही ध्यान अगर आदमी को जिन्दगी में रह जाय कि उसने मनुष्य के **आनन्द की तरफ** मनुष्य के **मंगल की तरफ** कुछ भी **धक्का** दे दिया था, तो भी मैं मानता हूं कि वह आदमी बहुत शांत अनुभव करेगा। लेकिन अगर हमने यह नहीं किया तो ध्यान रहे, यह नहीं हो सकता कि आप खाली रह जायें, धक्के तो आप दे ही रहे हैं, तब आप अशांति की तरफ देंगे, अमंगल की तरफ देंगे। आप जी रहे हैं, तो आपके धक्के तो जीवन को लगेंगे ही। अब सवाल इतना ही है कि धक्के किस तरफ ले जाते हैं और कहां ले जाते हैं—आदमी को मंगल की तरफ ले जाते हैं, शुभ की तरफ, आनन्द की तरफ ? इससे बड़ी कृतार्थता नहीं हो सकती कि एक आदमी अपने जीवन में सबके मंगल के लिए कुछ कर पाये।

बुद्ध अपने भिक्षुओं को कहते थे कि जब तुम ध्यान भी करो तो कभी ऐसा मत सोचना कि ध्यान से जो शांति मिलेगी वह मुझे मिल जाय, नहीं तो तुम कभी भी शांत न हो सकोगे, क्योंकि 'मुझे' का भाव भी अशांति है। बुद्ध कहते कि जब तुम्हें ध्यान से शांति मिलती हो तो तुम यह भी प्रार्थना

करना कि सबको बंट जाय। यह मत सोच लेना कि मुझे मिल जाय, क्योंकि मुझे मिलने का जो खयाल है वह भी अशांति का बुनियादी आधार है। वह बंट जाय, वह सबको मिल जाय। तो बुद्ध कहते हैं, ध्यान करते वक्त, बैठते वक्त कहना कि जो शांति आये वह सब में बंट जाय और वह सब तक दूर-दूर तक फैल जाय। उसमें मेरे 'मैं' को रखना ही मत। अगर ध्यान से उठना और शांति अनुभव हो, तो यही प्रार्थना करते उठना कि यह शांति सब तक फैल जाय। और बड़े मजे की बात है, जो अपने तक रोकना चाहता है वह सब तक तो फैला नहीं पाता, अपने तक भी पहुंचा नहीं पाता। और जो सब तक फैलाना चाहता है वह सब तक तो फैला देता है और अचानक पाता है कि सब तक फैलाने में उस तक तो शांति बहुत फैल ही गयी है।

●●●

स्वीकृति

जीवन
अस्वीकृति में—
खो जाने लगा था ...
किसी ने
कर बढ़ाये ...
थाम लिया !
भविष्य की चाह में—
मत कर
जीवन कुंठित ...
वर्तमान की अस्वीकृति में भी
स्वीकृति निहित है ... !

सौंप दे
स्वयं को—
अस्तित्व के हाथों
हर क्षण
हर पल
जीवन ...
तुम्हें स्वीकारे हुए है—
तुम भी तो
जीवन को
स्वीकार कर लो ... !!

— स्वामी अमृत परमहंस

मृत्यु पर विजय

संकलन : *मा योग मीरा*, जूनागढ़

(द्वारका, गुजरात में २८ अक्टूबर ६९ को भगवान श्री द्वारा दिया गया एक प्रवचन)

जिसे हम जान लेते हैं उससे हम मुक्त हो जाते हैं और जिसे हम जान लेते हैं उसे हम जीत भी लेते हैं। हमारी हार और पराजय हमारे अज्ञान के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। अंधकार है इसलिए पराजय है, प्रकाश है तो पराजय असंभव है। प्रकाश विजय बन जायगी। मृत्यु के संबंध में पहली बात आपसे यह कहना चाहूंगा कि मृत्यु से अधिक असत्य और कुछ भी नहीं है लेकिन मृत्यु ही सत्य मालूम होती है, न केवल सत्य मालूम होती है बल्कि जीवन का केन्द्रीय सत्य भी वही मालूम होती है और ऐसा प्रतीत होता है कि सारा जीवन मृत्यु से घिरा हुआ है और चाहे हम भूल जाते हों, भुला देते हों लेकिन फिर भी मृत्यु चारों तरफ निकट ही खड़ी रहती है। अपनी छाया से भी ज्यादा मृत्यु अपने पास है। जीवन का जो रूप हमने दिया है वह भी मृत्यु के भय के कारण ही दिया है। मृत्यु के भय ने समाज बनाया है, राष्ट्र बनाये हैं, परिवार बनाये हैं, मित्र इकट्ठे किये हैं। मृत्यु के भय ने धन इकट्ठा करने की दौड़ दी है, मृत्यु के भय ने पदों की आकांक्षा दी है और सबसे बड़ा आश्चर्य कि मृत्यु के भय ने हमारे भगवान और हमारे मंदिर भी खड़े कर दिये हैं। मृत्यु से भयभीत घुटने टेककर प्रार्थना करते हुए लोग हैं। मृत्यु से भयभीत आकाश की तरफ परमात्मा की तरफ हाथ जोड़े हुए लोग हैं और मृत्यु से

ज्यादा असत्य कुछ भी नहीं है इसीलिए मृत्यु को सत्य मानकर हमने जो भी जीवन की व्यवस्था की है वह असत्य हो गई है। लेकिन मृत्यु का असत्य हमें कैसे पता चले, यह हम कैसे जान पायें कि मृत्यु नहीं है और जब तक हम यह न जान पायें तब तक हमारा भय भी विलीन नहीं होगा और जब तक हम यह न जान पायें कि मृत्यु असत्य है तब तक जीवन हमारा सत्य नहीं हो सकता है। जब तक मृत्यु का भय है तब तक जीवन सत्य नहीं हो सकता है और जब तक मृत्यु से डरेंगे, कंपते रहेंगे तब तक जीवन के जीने की क्षमता भी हम नहीं जुटा पायेंगे। जीवन को सिर्फ वह ही जी सकता है जिसके सामने से मृत्यु की छाया विदा और विलीन हो गई है। कंपता हुआ मन कैसे जियेगा, डरा हुआ मन कैसे जियेगा? और मौत जब प्रतिपल आती हुई मालूम पड़ती हो तो हम कैसे जियेंगे, हम कैसे जी सकते हैं? और हम कितना ही भुला रखें मृत्यु को वह भूली नहीं रहती, मरघट हम गांव के बाहर बनायें तो भी कोई फर्क नहीं पड़ता, वह दिखायी पड़ेगा। रोज कोई न कोई मरता है, रोज कहीं न कहीं मृत्यु घटित होती है और हमारे जीवन की सारी की सारी नींव हिल जाती है और प्रत्येक बार जब भी मृत्यु घटती हुई दिखाई देती है तब हम जानते हैं कि मैं भी मरूंगा। जब हम किसी की मृत्यु पर रोते हैं तब हम सिर्फ उसकी मृत्यु पर ही नहीं रोते अपनी मृत्यु की खबर पर भी रोते हैं। और जब हम दुखी और पीड़ित होते हैं दूसरे की मृत्यु देखकर तब हम दूसरे की मृत्यु को देखकर ही दुखी और पीड़ित नहीं होते, उसमें हमारे मरने की संभावना भी प्रगट हो गई है। हर मृत्यु हमारी मृत्यु भी है और ऐसे जब तक हम घिरे रहेंगे तब तक कैसे जी सकेंगे? तब तक जीना असंभव है। तब तक हमें जीवन का पता भी नहीं चल सकता, न उसके आनन्द का, न उसके सौंदर्य का, न उसके रस का। तब तक जीवन का जो परम सत्य है—परमात्मा, उसके मंदिर के द्वार पर भी हम नहीं पहुंच सकते।

मृत्यु के भय ने एक तरह के मंदिर निर्मित किये हैं। वे परमात्मा के मंदिर नहीं हैं और मृत्यु के भय से एक तरह की प्रार्थनाएं निर्मित हुई हैं, वह भी परमात्मा की प्रार्थनाएं नहीं हैं। परमात्मा के मंदिर पर तो वह पहुंचता है जो जीवन के आनन्द से परिपूरित हो जाता है और परमात्मा की सीमा, जीवन के सौंदर्य और जीवन के रस से भरी हुई है और परमात्मा के द्वार की घंटियां सिर्फ उनके लिए बजती हैं जो सब तरह के भय से मुक्त होकर अभय हो जाते हैं। तब तो बड़ी कठिनाई मालूम पड़ती है। हम मृत्यु से भरे हुए

जीना चाहते हैं। ऐसा कभी भी नहीं हो सकता है, दो में से एक ही बात सत्य हो सकती है। ध्यान रहे, यदि जीवन सत्य है तो मृत्यु सत्य नहीं हो सकती और अगर मृत्यु सत्य है तो जीवन सिर्फ एक सपना होगा, झूठा होगा, वह सत्य नहीं हो सकता है। ये दोनों बातें एक साथ होनी असंभव हैं। लेकिन हमने इन दोनों बातों को एक साथ पकड़ रखा है। ऐसा भी लगता है कि हम जीते हैं और ऐसा भी लगता है कि हम मरे हैं।

मैंने सुना है कि किसी दूर पहाड़ी की तलहटी के पास एक फकीर का निवास था। लोग उसके पास बहुत-सी बातें पूछने चले जाते थे। एक बार उससे एक आदमी पूछने गया है कि हमें जीवन के और मृत्यु के सम्बन्ध में कुछ बताओ। उस फकीर ने कहा, अगर जीवन के सम्बन्ध में जानना हो तो स्वागत है, द्वार खुले हैं। मृत्यु के सम्बन्ध में जानना हो तो कहीं और जाओ। मैं न तो कभी मरा हूं और न कभी मर सकता हूं। मृत्यु का मुझे कोई अनुभव नहीं है। अगर मृत्यु के सम्बन्ध में जानना हो तो उनसे पूछो जो मर चुके। लेकिन तब वह फकीर हंसने लगा और कहा कि तब उनसे तुम पूछोगे कैसे जो मर ही चुके हैं। उनसे पूछने का भी उपाय नहीं है। और उस फकीर ने यह कहा कि अगर तुम मुझसे यह पूछो कि किसी मरे हुए का पता ठिकाना दे दूं तो भी नहीं दे सकता, क्योंकि जबसे मुझे यह पता चला है कि मैं नहीं मर सकता हूं तबसे मुझे यह भी पता चल गया है कि कोई कभी नहीं मरता है। कोई मरा ही नहीं है उस फकीर ने कहा। कैसे हम मानें उसकी बात, हम तो रोज किसी को मरते देखते हैं। रोज मृत्यु घटित होती है। मृत्यु बड़ा सत्य है, प्राणों को छेदकर दिखाई पड़ती है। आंखें बन्द करें, कितनी ही दूर हो, दिखाई पड़ती है, कितना ही भागें और बचें वह तो हमें घेर ही लेती है। इस सत्य को कैसे झुठला दें। कुछ लोग झुठलाने की कोशिश भी करते हैं। कुछ लोग मृत्यु के भय के कारण ही यह मान लेते हैं कि आत्मा अमर है। जानते नहीं हैं, सिर्फ मान लेते हैं। रोज सुबह उठकर दोहरा रहे हैं, मंदिरों में बैठकर, मस्जिदों में बैठकर कि कोई नहीं मरता है, आत्मा अमर है। और वे इस भ्रम में हैं कि बार-बार दोहराने से आत्मा अमर हो जायेगी और शायद वे इस खयाल में हैं कि बार-बार दोहराने से मौत को झूठा किया जा सकता है। मौत झूठी नहीं होती है दोहराने से, सिर्फ जानने से झूठी हो सकती है। ध्यान रहे, यह बहुत आश्चर्य की बात है, हम जिस बात को दोहराते हैं उससे विपरीत को हम सदा स्वीकार करते हैं। जब एक आदमी कहता है कि मैं

अमर हूं, आत्मा अमर है और दोहराता है तब इस बात का पता देता है कि भीतर वह जानता है कि मैं मरूंगा, मुझे मरना पड़ेगा। और वह यह जानता है कि मैं मरूंगा नहीं तो इस बात को दोहराने की कोई जरूरत नहीं है। इसे सिर्फ दोहराता वही है जो डरा हुआ है। इसलिए यह दिखाई पड़ेगा कि जो देश, जो समाज आत्मा की अमरता की बातें करते हैं उनसे ज्यादा मौत से डरने वाले लोग खोजने कठिन हैं। यह हमारा ही देश है जो आत्मा की अमरता की बात करते थकता नहीं है लेकिन फिर भी हमसे ज्यादा मौत से कोई डरता है इस पृथ्वी पर ? हमसे ज्यादा मौत से कोई भी नहीं डरता है। इन दोनों बातों में कैसे तालमेल बैठेगा। आत्मा को जो अमर मानते हैं उनके गुलाम होने की कभी संभावना है ? वे मर सकेंगे, मरने के लिए तैयार रहेंगे क्योंकि वे जानते हैं कि मृत्यु है ही नहीं। जो जानते हैं कि जीवन अमर है, आत्मा अमर है वे पहले चांद पर उतरेंगे, वे पहले एवरेस्ट पर चढ़ेंगे, वे पहले प्रशांत महासागर की गहराइयों में उतरेंगे। नहीं, हम उनमें से नहीं हैं। न हम एवरेस्ट की चोटी पर चढ़ते हैं, न हम चांद पर उतरते हैं, न हम हिन्द महासागर की गहराइयों में जाते हैं और हम आत्मा को अमर मानने वाले लोग हैं ! हम असल में इतने डरते हैं मृत्यु से कि उसी डर के कारण आत्मा अमर है इसको भी दोहराते रहते हैं और हमें यह भी भ्रम है कि शायद बार-बार दोहराने से जो हम दोहरा रहे हैं, वह सच हो जायगा। दोहराने से कोई भी बात सच नहीं हो सकती। मृत्यु नहीं है, ऐसा दोहराने से मृत्यु नहीं, नहीं हो जायगी। मृत्यु को जानना पड़ेगा कि क्या है, मृत्यु का साक्षात्कार करना पड़ेगा कि मृत्यु क्या है। मृत्यु को आंखों के सामने खड़ा करना पड़ेगा, देखना पड़ेगा, जानना पड़ेगा और हम सब तो मृत्यु की तरफ पीठ करके भागते रहते हैं तो मृत्यु को देख कैसे सकेंगे। हम सब तो मृत्यु की ओर आंख बंद कर लेते हैं। बाहर कोई मुर्दा हो, रास्ते पर किसी की लाश निकलती हो तो मां अपने बेटे को घर के भीतर बन्द कर लेती है और कहती है, मत जाओ, कोई मर गया है। मरघट इसीलिए गांव के बाहर बनाते हैं ताकि वह बार-बार दिखाई न पड़े। मौत सामने-सामने न आ जाय। अगर किसी से मरने की बात करो तो वह कहेगा, ये बातें मत करिये।

एक संन्यासी के साथ मैं कुछ दिन तक ठहरा हुआ था। वे संन्यासी रोज आत्मा की अमरता की बात चलाते थे। मैंने उनसे कहा, कभी आप यह भी सोचते हैं कि आपके मरने का दिन करीब आ रहा है, तो उन्होंने कहा,

ऐसी अपशकुन की बातें मत करिये, यह बात ही मत करिये। मैंने उनसे कहा, जो आदमी कहता है, आत्मा अमर है, उसे मृत्यु की बात में अपशकुन दिखाई पड़े तो बड़ी गड़बड़ होगी। मृत्यु की बात में तो उसे कोई भय, और कोई भी अपशकुन और कोई बुराई नहीं दिखाई पड़नी चाहिए क्योंकि मृत्यु तो उसके लिए है ही नहीं। उन्होंने कहा, हां, आत्मा अमर है फिर भी मैं मृत्यु के बाबत कुछ बात करने को नहीं रखता हूं। ऐसी बेकार की बातें नहीं करनी चाहिए। ऐसी खतरनाक बातें नहीं करनी चाहिएं। हम भी यही कर रहे हैं और मृत्यु की तरफ पीठ करके भागे हुए हैं।

मैंने सुना है कि एक गांव में एक आदमी को बड़ा पागलपन सवार हो गया। एक रास्ते से गुजर रहा था। भरी दोपहरी थी, अकेला रास्ता था, निर्जन था। तेजी से चल रहा था कि निर्जन में कोई डर न हो जाय। हालांकि डर वहां होगा जहां कोई और है, जहां कोई भी नहीं है वहां डर का क्या उपाय हो सकता है लेकिन हम वहां डरते हैं जहां कोई भी नहीं होता है। असल में हम अपने से ही डरते हैं और जब हम अकेले रह जाते हैं तो बहुत डर लगने लगता है। हम अपने से जितना डरते हैं उतना किसी से भी नहीं डरते। इसलिए कोई साथी हो, कोई भी साथ हो तो डर कम लगता है और बिल्कुल अकेले रह जाते हैं तो बहुत डर लगने लगता है। वह आदमी अकेला था और डर गया और भागने लगा। सन्नाटा था, सुनसान था, दोपहर थी, कोई भी न था। जब वह तेजी से भागा तो अपने ही पैरों की आवाज उसे पीछे से आती हुई मालूम पड़ी। वह डरा कि शायद कोई पीछे है। फिर उसने डरे हुए चोरी की आंख से पीछे झांककर देखा तो एक लंबी छाया उसका पीछा कर रही थी, वह उसकी अपनी ही छाया थी, लेकिन यह देखकर कि कोई लम्बी छाया उसके पीछे पड़ी हुई है, वह और भी तेजी से भागा। फिर वह आदमी कभी रुका नहीं होगा मरने के पहले क्योंकि वह जितनी तेजी से भागा छाया उसके पीछे उतनी तेजी से भागी। फिर वह आदमी पागल हो गया। लेकिन पागलों को पूजने वाले भी मिल जाते हैं। जब वह गांव से भागा हुआ निकलता और लोग देखते कि वह भागा हुआ जा रहा है तो लोग समझते कि वह बड़ी तपश्चर्या में रत है, वह कभी रुकता नहीं। वह सिर्फ रात के अंधेरे में रुकता है जब छाया खो जाती थी। तब वह सोचता था कि डर कोई पीछे नहीं है। सुबह हुई और वह भागना शुरू कर देता था। फिर तो बाद में उसने रात में भी रुकना बन्द कर दिया। उसे ऐसा समझ में आया कि जब तक मैं

विश्राम करता हूं मालूम होता है जितना दूर भागकर के दिन भर में मैं दूर निकलता हूं उतनी देर में छाया फिर वापस आ जाती है, सुबह फिर मेरे पीछे हो जाती है। तब उसने रात भी रुकना बन्द कर दिया। फिर वह पूरा पागल हो गया। फिर वह खाता भी नहीं, पीता भी नहीं। भागते हुए लाखों की भीड़ उसको देखती, फूल फेंकती। कोई राह चलते उसके हाथ में रोटी पकड़ा देता, कोई पानी पकड़ा देता। उसकी पूजा बढ़ती चली गई। लाखों लोग उसका आदर करने लगे। लेकिन वह आदमी पागल होता चला गया और अंततः वह आदमी एक दिन गिरा और मर गया। गांव के लोगों ने, जिस गांव में वह मरा था उसकी कब्र बना दी। एक वृक्ष के नीचे छाया में, और उस गांव के एक बूढ़े फकीर से उन्होंने पूछा कि हम इसकी कब्र पर क्या लिखें, तो उस फकीर ने एक लाइन उसकी कब्र पर लिख दी। किसी गांव में, किसी जगह वह कब्र अब भी है। हो सकता है कभी आपका उस जगह से निकलना हो तो पढ़ लेना। उस कब्र पर उस फकीर ने लिख दिया है कि यहां ऐसा आदमी सोता है जो जिन्दगी भर अपनी छाया से भागता रहा है, जिसने जिन्दगी छाया से भागने में गंवा दी। और उस आदमी को इतना भी पता नहीं था जितना उसकी कब्र को पता था; क्योंकि कब्र छाया में है और भागती नहीं इसलिए कब्र की कोई छाया ही नहीं बनती है। इसके भीतर जो सोया है उसे इतना भी पता नहीं है जितना उसकी कब्र को पता है। हम भी भागते हैं। हमें आश्चर्य होगा कि कोई आदमी छाया से भागता है। हम सब भी छायाओं से ही भागते हैं और जिससे हम भागते हैं वही हमारे पीछे पड़ जाता है; और जितनी तेजी से हम भागते हैं उसकी दौड़ भी उतनी ही तेज हो जाती है, क्योंकि वह हमारी ही छाया है।

मृत्यु हमारी ही छाया है और अगर हम उससे भागते रहें तो हम उसके सामने कभी खड़े होकर पहचान न पायेंगे कि वह क्या है। काश, वह आदमी रुक जाता और पीछे लौटकर देख लेता तो शायद अपने पर हंसता और कहता, कैसा पागल हूं, छाया से भागता हूं! अब छाया से कोई भागे तो कभी भी भाग नहीं सकता और छाया से कोई लड़े तो जीत नहीं सकता। इसका मतलब यह नहीं है कि छाया बहुत ताकतवर है और उससे हम जीत नहीं सकते। इसका केवल इतना ही मतलब है कि छाया है ही नहीं, उससे जीतने की कोई बात ही नहीं उठती। जो नहीं है उससे जीता नहीं जा सकता, इसीलिए लोग मृत्यु से हारते चले जाते हैं, क्योंकि मृत्यु केवल जीवन की छाया है। जब

जीवन चलता है तो छाया चलती है उसके पीछे। वह जीवन के पीछे बनने वाली शैडो है और हम कभी लौटकर नहीं देखना चाहते कि वह क्या है। तो हम कई बार दौड़-दौड़ के थक-थक के गिर चुके हैं बहुत बार। इस तट पर आप पहली ही बार आये होंगे, ऐसा नहीं, और बहुत बार भी आ चुके होंगे। यह तट नहीं रहा होगा, कोई और तट रहा होगा। यह शरीर न रहा होगा कोई और शरीर रहा, लेकिन दौड़ यही रही होगी। पैर यही रहे होंगे, भाग यही रही होगी।

मृत्यु से डरते हुए हम अनेक जीवन जी लेते हैं और फिर भी पहचान नहीं पाते और देख नहीं पाते। हम इतने भयभीत और डरे हुए लोग हैं कि जब मौत सामने आती है, जब वह पूरी छाया हमें घेरती है तब हम डर के कारण बेहोश हो जाते हैं। कोई भी आदमी साधारणतः मरते क्षण होश में नहीं रहता। अगर होश में एक बार भी रह जाय तो फिर मृत्यु का भय उसके लिए सदा के लिए विलीन हो जाय। अगर वह एक दफा देख ले कि मरना यानी क्या, मरने में होता क्या है तो फिर दोबारा उसे मृत्यु का भय न रहे, क्योंकि मृत्यु ही न रहे और ऐसा नहीं है कि वह मृत्यु पर विजय पा ले। विजय तो उस पर पाते हैं जो हो। सिर्फ जानने से ही मृत्यु मिट जाती है। विजय पाने को कुछ शेष नहीं रहता। लेकिन हम भी बहुत बार मरे लेकिन जब भी मरे हैं, बेहोश हो गये हैं। जैसा कि डाक्टर या सर्जन आपरेशन करता है तो आपरेशन के पहले बेहोशी की दवा दे देता है ताकि आपको पता न चले कि तकलीफ हो रही है। मरने से हम इतने डरे हुए लोग हैं कि मरते वक्त हम स्वेच्छा से ही बेहोश हो जाते हैं। मरने के थोड़ी देर पहले ही बेहोश हो जाते हैं, बेहोशी में ही मरते हैं, फिर बेहोशी में ही नया जन्म हो जाता है। न हम मृत्यु को देख पाते हैं, न हम जन्म को देख पाते हैं और इसलिए हम कभी भी नहीं समझ पाते हैं कि जीवन शाश्वत है। मृत्यु और जन्म बीच में आये हुए पड़ाव से ज्यादा नहीं है जहां हम वस्त्र बदल लेते हैं या घोड़े बदल लेते हैं। पुराने जमाने में रेलगाड़ियां नहीं थीं, लोग घोड़े-गाड़ियों से यात्रा करते थे। एक गांव से दूसरे गांव जाते थे, वहां घोड़े बदल लेते थे क्योंकि घोड़े थक जाते थे। घोड़े बदल कर वापस कर देते, दूसरे सराय से घोड़े ले लेते, फिर आगे भी गांव में घोड़े ले लेते थे। लेकिन उन घोड़े बदलने वालों को ऐसा नहीं लगता था कि हम मर गए, हमारा फिर जन्म हुआ, क्योंकि वे होश में बदलते थे। लेकिन कभी-कभी ऐसा भी होता था कि कोई

घोड़े वाला शराब पीकर यात्रा करता था। तो घोड़े तो बदल जाते थे। जैसे ही घोड़ा बदलता और गौर से देखता तो कहता था, यह सब बदल गया, यह सब दूसरा हो गया।

मैंने सुना है, कभी कोई शराब पीने वाले घुड़सवार ने यह कहा था कि कहीं मैं भी तो नहीं बदल गया क्योंकि वह घोड़ा ही नहीं है। तो मैं कहीं दूसरा आदमी तो नहीं हो गया।

जन्म और मृत्यु सिर्फ वाहन हैं, बदलने के स्थान हैं जहां पुराने वाहन छोड़ दिए जाते हैं, थके घोड़े छोड़ दिये जाते हैं और ताजे घोड़े ले लिये जाते हैं, लेकिन ये दोनों कृत्य हमारी बेहोशी में हो जाते हैं और जिसका जन्म और मृत्यु बेहोशी में है उसका जीवन भी होश में नहीं हो सकता है। उसका जीवन भी करीब-करीब अर्द्ध-बेहोशी में अर्द्ध-मूर्छा में रह जाता है। मैं यह कहना चाहता हूं कि मृत्यु को देखना जरूरी है, जानना जरूरी है, उसे पहचानना जरूरी है लेकिन यह तो जब मरेंगे तब हो सकता है। मैं जब मरूंगा तब देख सकूंगा। फिर अभी क्या उपाय है और जब कोई मरेगा तब अगर देख सकेगा तो फिर समझने का उपाय ही नहीं है क्योंकि वह बेहोश ही हो जायगा मरते वक्त। हां, अभी एक उपाय है, अभी हम स्वेच्छा से मृत्यु में प्रवेश का प्रयोग कर सकते हैं और मैं आपसे कहना चाहता हूं ध्यान या समाधि और कुछ भी नहीं है। ध्यान और समाधि स्वेच्छा से मृत्यु के अनुभव में प्रवेश है। जो शरीर छूटने पर एकदम अपने आप घटित होगी घटना वह हम अभी भी अपनी स्वेच्छा से शरीर में भीतर छोड़कर हट जा सकते हैं और जान सकते हैं कि मृत्यु हो गई, मृत्यु गुजर गई। हम मृत्यु का आज भी, इस रात भी साक्षात्कार कर सकते हैं, क्योंकि मृत्यु की घटना का कुल इतना मतलब है कि हमारा शरीर और हमारी आत्मा एक उस यात्रा पर भेद को अनुभव कर ले, जहां बैलगाड़ी छूट जाती है और यात्री आगे निकल जाता है।

मैंने सुना है, शेख फरीद के पास कभी एक आदमी गया और उस आदमी ने पूछा कि सुनते हैं हम कि जब मंसूर के हाथ काटे गए, पैर काटे गए तो मंसूर को कोई तकलीफ न हुई, लेकिन विश्वास नहीं आता। पैर में कांटा गड़ जाता है तो तकलीफ होती है, हाथ-पैर काटने से तकलीफ नहीं हुई होगी? यह सब कपोल-कल्पित कहानियां मालूम होती हैं। और उस आदमी ने कहा कि यह भी हम सुनते हैं कि जब जीसस को सूली पर लटकाया गया तो वे जरा भी दुखी नहीं हुए और जब उनसे कहा गया कि अंतिम कुछ प्रार्थना

करनी हो तो कर सकते हो। तो सूली पर लटके हुए, कांटों से छिदे हुए, हाथों में कीलों से बिंधे हुए, लहू बहते हुए उस अन्तिम क्षण में जीसस ने जो कहा वह विश्वास के योग्य नहीं है, उस आदमी ने कहा। जीसस ने यह कहा कि क्षमा कर देना इन लोगों को, क्योंकि ये नहीं जानते कि ये क्या कर रहे हैं। यह वाक्य आपने भी सुना होगा और सारी दुनिया में जीसस के मानने वाले लोग निरंतर इसको दोहराते हैं। यह वाक्य बड़ा सरल है। जीसस ने कहा, इन लोगों को क्षमा कर देना परमात्मा, क्योंकि ये नहीं जानते कि ये क्या कर रहे हैं। आम तौर पर इस वाक्य को पढ़ने वाले ऐसा समझते हैं कि जीसस ने यह कहा कि ये बेचारे नहीं जानते कि मुझ अच्छे आदमी को मार रहे हैं; नहीं, जीसस का यह मतलब नहीं था। जीसस का मतलब यह था कि इन पागलों को यह पता नहीं है कि जिसको वे मार रहे हैं वह मर ही नहीं सकता है। इनको माफ कर देना, इनको पता नहीं है कि ये क्या कर रहे हैं। ये एक ऐसा काम कर रहे हैं जो असंभव है। ये मारने का काम कर रहे हैं जो असम्भव है। उस आदमी ने कहा, विश्वास नहीं हो सकता कि मारा जाता हुआ आदमी इतनी करुणा कर सकता हो। उस वक्त तो वह क्रोध से भर जायेगा। फरीद खुद हंसने लगा और उसने कहा, तुमने खूब अच्छा सवाल उठाया। लेकिन उस सवाल का जवाब मैं बाद में दूंगा। एक छोटा-सा मेरा काम कर लाओ।

पास में पड़ा हुआ एक नारियल उठाकर दे दिया उस आदमी को और कहा कि इसे फोड़ डालो। लेकिन ध्यान रहे, इसकी गिरी को पूरी तरह बचा लेना, गिरी टूट न जाय। लेकिन वह नारियल था कच्चा। उस आदमी ने कहा, माफ करियेगा, यह काम मुझसे न हो सकेगा। नारियल बिल्कुल कच्चा है और अगर मैंने इसकी खोल तोड़ी तो गिरी भी टूट जायगी। तो उस फकीर ने कहा, उसे रख दो। दूसरा नारियल उसको दिया जो कि सूखा था और कहा कि इसे तोड़ लाओ। इसकी गिरी तो तुम बचा सकोगे ? उस आदमी ने कहा, इसकी गिरी बच सकती है। उस फकीर ने कहा, मैंने तुम्हें जवाब दिया, कुछ समझ में आया ? उस आदमी ने कहा, मेरी कुछ समझ में नहीं आया। नारियल का और मेरे जवाब का क्या संबंध है, मेरे सवाल का क्या संबंध है? उस फकीर ने कहा, इस नारियल को भी रख दो, कुछ फोड़ना-फाड़ना नहीं। मैं तो तुमसे यह कह रहा हूं कि एक कच्चा नारियल है जिसकी गिरी और खोल अभी आपस में जुड़ी हुई हैं। अगर तुम उसके खोल को चोट पहुंचाओगे तो

उसकी गिरी भी टूट जायेगी। फिर एक सूखे नारियल और कच्चे नारियल में फर्क ही क्या है? छोटा-सा फर्क है कि उसकी गिरी सिकुड़ गई है भीतर और खोल से अलग हो गई है। गिरी और खोल के बीच में एक फासला हो गया है। अब तुम कहते हो कि इसकी खोल तोड़ देंगे तो गिरी बच सकती है। तो मैंने तुम्हारे सवाल का जवाब दे दिया। उस आदमी ने कहा, मैं फिर भी नहीं समझा। तो उस फकीर ने कहा, जाओ, मरो और समझो। इसके बिना तुम समझ नहीं सकते। लेकिन तब भी तुम समझ नहीं पाओगे क्योंकि तब तुम बेहोश हो जाओगे। खोल और गिरी एक दिन अलग होंगे लेकिन तब तुम बेहोश हो जाओगे और अगर समझना है तो अभी खोल और गिरी को अलग करना सीखो जिन्दा में। और अगर अभी खोल और गिरी अलग हो जायें तो मौत खत्म हो गई। वह फासला पैदा होने से हम जानते हैं कि खोल अलग, गिरी अलग और खोल टूट जायेगी तो भी मैं नहीं मरूंगा, तो भी मेरे टूटने का कोई सवाल नहीं है। मृत्यु घटित होगी तो भी मेरे भीतर प्रवेश नहीं कर सकती है, मेरे बाहर ही घटित होगी यानी वही मरेगा, जो मैं नहीं हूं। जो मैं हूं, वह बच जायगा।

ध्यान या समाधि का यही अर्थ है कि हम अपनी खोल और गिरी को अलग करना सीख जायें। वे अलग हो सकते हैं क्योंकि वे अलग हैं। वे अलग-अलग जाने जा सकते हैं क्योंकि वे अलग हैं। इसलिए ध्यान को मैं कहता हूं स्वेच्छा से मृत्यु में प्रवेश। अपनी ही इच्छा से मौत में प्रवेश। जो आदमी अपनी ही इच्छा से मौत में प्रवेश कर लेता है वह मौत का साक्षात्कार कर लेता है कि यह रही मौत और मैं अभी भी हूं।

सुकरात मर रहा है, आखिरी क्षण है। जहर पीसा जा रहा है उसे मारने के लिए। वह बार-बार पूछता है कि बड़ी देर हो गई, जहर कब तक पिसेगा। उसके मित्र रो रहे हैं और कह रहे हैं कि आप पागल हो गए हैं, हम चाहते हैं कि थोड़ी देर और जी लो तो हमने जहर पीसने वाले को रिश्वत दी हुई है, समझाया-बुझाया है कि थोड़ा धीरे-धीरे पीसना। सुकरात बाहर पहुंच जाता है और जहर पीसने वाले से पूछता है कि बड़ी देर लगा रहे हो, बड़े अकुशल मालूम होते हो, नये-नये पीस रहे हो? पहले किसी फांसी की सजा दिए हुए आदमी को तुमने जहर नहीं दिया है? वह आदमी कहता है, जिंदगी भर से दे रहा हूं, लेकिन तुम जैसा पागल आदमी मैंने नहीं देखा। तुम्हें इतनी जल्दी क्या पड़ी है, और थोड़ी देर सांस ले लो, और थोड़ी देर जी लो, और

थोड़ी देर जिंदगी में रह लो, मैं धीरे-धीरे पीस रहा हूं। तुम खुद ही पागल की तरह बार-बार पूछ रहे हो कि बड़ी देर हो जायगी। इतनी जल्दी क्या है मरने की ? सुकरात कहता है बड़ी जल्दी है क्योंकि मैं मौत को देखना चाहता हूं। मैं देखना चाहता हूं कि मौत क्या है और मैं यह भी देखना चाहता हूं कि मौत भी हो जाय और फिर मैं भी बचता हूं या नहीं बचता हूं। अगर नहीं बचता हूं तो सारी बात ही समाप्त हो जाती है और अगर बचता हूं तो मौत समाप्त हो जाती है। असल में मैं यह देखना चाहता हूं कि मौत की घटना में कौन मरेगा ? मौत मरेगी कि मैं मरूंगा। मैं बचूंगा या मौत बचेगी, यह मैं देखना चाहता हूं। क्योंकि बिना खाये कैसे देखूं ? फिर सुकरात को जहर दे दिया गया।

सारे मित्र छाती पीटकर रो रहे हैं और होश में नहीं हैं और सुकरात क्या कर रहा है ? सुकरात उनसे कह रहा है कि मेरे पैर मर गये लेकिन अभी मैं जिन्दा हूं। सुकरात कहता है, मेरे घुटने तक जहर चढ़ गया है, मेरे घुटने तक के पैर बिल्कुल मर चुके हैं। अब अगर तुम इन्हें काटो तो भी मुझे पता नहीं चलेगा, लेकिन मित्रो ! मैं तुमसे कहता हूं कि मेरे पैर तो मर गए लेकिन मैं जिन्दा हूं। यानी एक बात पक्की हो गई कि मैं पैर नहीं था। मैं अभी हूं, मैं पूरा का पूरा हूं। मेरे भीतर अभी कुछ भी कम नहीं हो गया है। फिर सुकरात कहता है कि अब मेरे पूरे पैर जा चुके, जांघ तक सब समाप्त हो चुका है। अगर मेरी जांघों तक को काट डालो, मुझे कुछ भी पता नहीं चलेगा और वह मित्र हैं कि रोये चले जा रहे हैं। सुकरात कह रहा है कि रोओ मत, एक मौका तुम्हें मिला है, देखो। एक आदमी मर रहा है और तुम्हें खबर दे रहा है कि फिर भी वह जिन्दा है। मेरे पैर तक पूरे काट डालो तो भी मैं नहीं मरा हूं, मैं अभी हूं और फिर वह कहता है कि मेरे हाथ भी ढीले पड़ते जा रहे हैं, हाथ भी मर जायेंगे। आह ! मैं कितनी बार अपने हाथों को स्वयं समझा था, वे हाथ भी चले जा रहे हैं, लेकिन मैं हूं और वह सुकरात मरता हुआ कहता चला जाता है, वह कहता है, धीरे-धीरे सब शांत हुआ जा रहा है, सब डूबे जा रहा है, लेकिन मैं उतना का ही उतना हूं। सुकरात कहता है, हो सकता है थोड़ी देर बाद मैं तुमको खबर देने को न रह जाऊं, लेकिन तुम यह मत समझ लेना कि मैं मिट गया; क्योंकि जब इतना शरीर मिट गया और मैं नहीं मिटा, तब थोड़ा शरीर और मिट जायेगा तब भी मैं नहीं मिटूंगा। हो सकता है तुम्हें खबर न दे सकूं क्योंकि खबर शरीर के द्वारा ही दी जा

सकती है लेकिन मैं रहूंगा और वह आखिरी क्षण में कहता है कि शायद आखिरी बात तुमसे कह रहा हूं। जीभ मेरी लड़खड़ा गई है और अब इसके आगे मैं एक शब्द नहीं बोल सकूंगा, लेकिन मैं अभी भी कह रहा हूं, मैं हूं। वह आखिरी वक्त यह कहता हुआ मर गया है कि मैं हूं।

ध्यान में भी धीरे-धीरे ऐसे ही भीतर प्रवेश करना पड़ता है और धीरे-धीरे एक-एक चीज छूटती चली जाती है, एक-एक चीज से फासला पैदा होता चला जाता है। और फिर वह घड़ी आ जाती है कि लगता है, सब दूर पड़ जाता है; जैसे तट पर किसी और की लाश लगी होगी, ऐसा लगेगा और मैं हूं। सिर वह पड़ा है और फिर भी मैं हूं और अलग, और भिन्न—बिल्कुल दूसरा। जैसे ही हमें यह अनुभव हो जाता है, हमने मृत्यु का साक्षात्कार कर लिया जीते हुए, फिर मृत्यु से हमारा कोई संबंध कभी नहीं होगा। मृत्यु आती रहेगी, लेकिन तब वह पड़ाव होगी, वस्त्र का बदलना होगा, जहां हम नये घोड़े ले लेंगे और नये शरीरों पर सवार हो जायेंगे और नयी यात्रा पर निकलेंगे, नये मार्गों पर, नये आलोकों में। लेकिन मृत्यु हमें मिटा नहीं पायेगी। इस बात का पता साक्षात्कार से ही हो सकता है, एनकाउंटर से हो सकता है। हमें जानना ही पड़ेगा, हमें गुजरना ही पड़ेगा और मरने से हम इतने डरते हैं इसीलिए हम ध्यान भी नहीं कर पाते। हमारे पास कितने ही लोग आते हैं और कहते मैं ध्यान नहीं कर पाता हूं। मैं उनसे क्या कहूं। उनकी असली तकलीफ और है और ध्यान करने की एक प्रक्रिया है। ध्यान में हम वहीं पहुंच जाते हैं, जहां मरा हुआ आदमी पहुंचता है। फर्क सिर्फ एक होता है कि मरा हुआ आदमी बेहोश पहुंचता है, हम होश में पहुंच जाते हैं, बस इतना ही फर्क होता है। मरे हुए आदमी को पता नहीं होता कि क्या हो गया, खोल कैसे टूट गई और गिरी कैसे बच गई और हमें पता होता है कि गिरी अलग हो गई है, खोल अलग हो गई है। तो जो लोग ध्यान में नहीं जा पाते हैं, उनके न जा पाने का बुनियादी कारण मृत्यु का भय है और कोई कारण नहीं। और जो व्यक्ति मृत्यु से डरे हुए हैं वे कभी भी समाधि में प्रवेश नहीं कर सकेंगे। समाधि अपने हाथ से मृत्यु को आमंत्रण है कि आओ, मैं मरने को तैयार हूं। मैं जानना चाहता हूं कि मौत हो जायगी, मैं बचूंगा, न बचूंगा ? और अच्छा है कि मैं होशपूर्वक जान लूं; क्योंकि बेहोशी में यह घटना घटेगी तो मैं कुछ भी नहीं जान पाऊंगा। इसलिए, पहली बात, आज की रात आपसे कहता हूं कि मृत्यु से जब तक आप भागेंगे तब तक आप मृत्यु से हारते रहेंगे और

जिस दिन खड़े होकर मृत्यु के आमने-सामने हो जायेंगे उसी दिन मौत विदा हो जायेगी, आप शेष रह जायेंगे।

इधर इन तीन दिनों में मृत्यु के आमने-सामने आपको कैसे खड़ा कर सकते हैं, उसकी ही प्रक्रिया पर मैं सारी बात करूंगा, इन तीन दिनों में ऐसा करूंगा कि बहुत से लोग मरना जान लेंगे, मर सकेंगे और अगर यहां मर सकें—इस तट पर, और यह तट बहुत अद्‌भुत है, इस तट पर उस आदमी के पैर पड़े जिसने किसी युद्ध में कहा था—अर्जुन को कहा था कृष्ण ने कि तू फिक्र मत कर और डर मत। तू मरने-मारने से मत डर; क्योंकि मैं तुमसे कहता हूं कि न कोई मरता है न कोई मारता है, न कोई कभी मरा है,न कभी कोई मर सकता है; और जो मरता है और जो मर सकता है वह मरा ही हुआ है; और जो नहीं मरता है और नहीं मर सकता है उसके मरने का कोई उपाय नहीं है— वही जीवन है। इस तट पर उस कृष्ण के पैर पड़े हैं, इस तट पर हम अचानक इकट्ठे हो गए हैं। इस रेत ने उस कृष्ण को आते और जाते देखा। लोगों ने समझा होगा कृष्ण मर ही गए। हम सब, जो मरने को ही सत्य जानते हैं उनके लिए सब मर जाते हैं। इस सागर ने, इस रेत ने नहीं जाना कि वह मर गये। इस आकाश ने, इन चांद-तारों ने नहीं जाना कि वे मर गये। जीवन में कहीं भी मृत्यु की कोई लहर ही नहीं है, लेकिन हम सबने यही जाना कि वे मर गए और हम सब इसीलिए ऐसा जान लेते हैं, क्योंकि हमको अपने ही मरने का खयाल सवार है। और हमें अपने का इतना खयाल क्यों सवार है ? हम अभी तो जी रहे हैं, हम मरने से इतने भयभीत क्यों हैं ? हम मरने से इतने डरे हुए क्यों हैं ? असल में इसके पीछे एक राज है, उसे समझ लेना चाहिए।

एक गणित है और वह गणित बड़े मजे का है। हमने अपने को तो मरते कभी नहीं देखा है, लेकिन हम दूसरे को मरते देखते हैं और दूसरे को मरते देखकर हमारी धीरे-धीरे यह धारणा मजबूत हो जाती है कि मुझे भी मरना पड़ेगा। अब एक बूंद है, और हजारों बूंदों के बीच में पड़ी है। सूरज की किरण आई और उस एक बूंद पर जोर से पड़ी और वह बूंद भाप बनकर उड़ गई। आस-पास की बूंदों ने समझा कि वह मर गई, वह खत्म हो गई और ठीक ही सोचा उन बूंदों ने, क्योंकि उन्हें दिखाई पड़ा कि अब तक थी, अब नहीं है। लेकिन वह बूंद अब भी बादलों में है। यह वे बूंदें कैसे जानें, जो खुद भी बादल न हो जायं, या बूंद अब सागर में जाकर फिर बूंद बन गई होगी, यह वे बूंदें कैसे जानें जब तक कि वे खुद उस यात्रा पर न निकल जायें।

हम सब आस-पास जब किसी को मरते देखते हैं, तो समझते हैं, गया एक आदमी, मरा। हमें पता नहीं कि वह वाष्पीभूत हुआ। वह फिर सूक्ष्म में गया और फिर नई यात्रा पर निकल गया। वह बूंद भाप बनी और फिर बूंद बनने के लिए भाप बन गई, यह हमें कैसे दिखाई पड़ेगा ? हम सबको लगता है कि एक व्यक्ति और खो गया, एक व्यक्ति और मर गया और ऐसे रोज कोई मरता चला जाता है और रोज कोई बूंद खोती चली जाती है और धीरे-धीरे हमें भी पक्का हो जाता है कि मुझे भी मर जाना पड़ेगा। मैं भी मर जाऊंगा और तब एक भय पकड़ लेता है कि मैं मर जाऊंगा। दूसरे को देखकर यह भय पकड़ लेता है। दूसरे को ही देखकर हम जीते हैं इसलिए हमारी बड़ी कठिनाई है। कल रात ही मैं कुछ मित्रों से कह रहा था :

एक यहूदी फकीर हुआ। वह फकीर अपने दुखों से बहुत परेशान हो गया है। कौन परेशान नहीं हो जाता है ? हम सब अपने दुखों से परेशान हैं। हमारे दुख में सबसे बड़ी परेशानी दूसरे के सुख हैं। दूसरे सुखी दिखाई पड़ते हैं और हम दुखी होते चले जाते हैं और इसमें बड़ी गणित है, वही गणित, जिसकी मैंने आपसे मौत के सम्बन्ध में बात की है। **हमें अपना दुख दिखाई पड़ता है और दूसरे के चेहरे दिखाई पड़ते हैं, उनके भीतर का दुख तो दिखाई पड़ता नहीं, उनकी आंखों की, उनके ओठों की मुस्कुराहटें दिखाई पड़ती हैं** और कभी अगर अपने बाबत समझें सोचें, तो पावेंगे कि हम भी भीतर दुखी होते हैं तब भी हम बाहर मुस्कुराये चले जाते हैं। असल में दुख को छिपाने की मुस्कुराहट एक तरकीब है। कोई अपने को दुखी नहीं देखना चाहता है। अगर सुखी न हो सके तो भी कम से कम सुखी हो गया है ऐसा तो दिखाना ही चाहता है, क्योंकि अपने को दुखी दिखाना बड़ी दीनता और हार की और पराजय की बात है। इसलिए हम बाहर एक मुस्कुराता हुआ चेहरा बना लेते हैं—नाटक, अभिनय करते हैं और भीतर हम जुड़े हुए होते हैं। भीतर ऐसे इकट्ठे होते चले जाते हैं, बाहर मुस्कुराहट का अभ्यास कर लेते हैं। तो जब बाहर से हमें कोई देखता है तो हमारी मुस्कुराहट दिखाई पड़ती है और अपने भीतर देखता है तो दुख दिखाई पड़ता है, तब वह मुश्किल में पड़ जाता है। वह सोचता है सारी दुनिया सुखी है, एक मैं ही दुखी हूं। उस फकीर को भी ऐसा ही हुआ। उसने एक दिन रात परमात्मा को कहा कि मैं तुझसे यह नहीं कहता कि मुझे दुख न दे; क्योंकि अगर मैं दुख देने योग्य हूं तो मुझे दुख मिलेगा ही, लेकिन इतनी प्रार्थना तो कर सकता हूं कि इतना ज्यादा मत दे। दुनिया में सब लोग हंसते दिखाई पड़ते हैं लेकिन मैं भर एक रोता हुआ आदमी हूं; सब खुश नजर

आते हैं, एक मैं ही दुखी हूं, सब खुशहाल दिखाई पड़ते हैं, एक मैं ही उदास अंधेरे में खो गया हूं। आखिर मैंने तेरा क्या बिगाड़ा है ? एक कृपा कर, मुझे किसी दूसरे आदमी का दुख दे दे और मेरा दुख उसे दे दे, बदल दे किसी से भी तो भी मैं राजी हो जाऊंगा। रात वह सोया और एक सपना देखा, एक बहुत बड़ा भवन है और उस भवन में लाखों खूंटियां लगी हैं और लाखों लोग चले आ रहे हैं और प्रत्येक आदमी अपनी-अपनी पीठ पर दुखों की एक गठरी बांधे हुए है। दुखों की गठरी देखकर वह डर गया, क्योंकि उसे बड़ी हैरानी मालूम पड़ी। वह भी अपनी गठरी टांगे हुए है। सबके दुखों की गठरियों का जो आकार है वह बिल्कुल बराबर है। मगर वह बड़ा हैरान हुआ। यह पड़ोसी तो उसका रोज मुस्कुराता दीखता था और सुबह जब उससे पूछता था, कहो कैसा हाल है तो वह कह देता था, बड़ा आनन्द है, ओ० के० ठीक है। और यह आदमी भी इतने दुखों का बोझ लिए चले आ रहा है। उसमें नेता भी उतने ही बोझ लिए हैं, अनुयायी भी उतने बोझ लिए हुए हैं, गुरु भी उतना ही बोझ लिए हुए है, शिष्य भी उतना ही बोझ लिए हुए है। सभी उतना बोझ लिए चले आ रहे हैं—ज्ञानी और अज्ञानी। अमीर और गरीब, बीमार और स्वस्थ, सबके बोझ की गठरी बराबर है। वह बहुत हैरान हो गया। आज पहली दफा गठरी दिखाई पड़ी, अब तक तो चेहरे दिखाई पड़ते थे, फिर उस भवन में एक जोर की आवाज गूंजी कि सब लोग अपने-अपने दुखों को खूंटियों पर टांग दें। इसने भी अपने दुख को खूंटी पर टांग दिया। सारे लोगों ने जल्दी की दुख टांगने की। कोई एक क्षण भी अपने दुख को अपने ऊपर रखना नहीं चाहता। टांगने का मौका मिले तो हम जल्दी से टांग ही देंगे। और तभी एक दूसरी आवाज गूंजी कि अब जिसको जिसकी गठरी चुननी हो वह चुन ले। तो हम सोचेंगे कि उस फकीर ने जल्दी से किसी और की गठरी चुन ली होगी ? नहीं, ऐसी भूल उसने नहीं की। वह भागा घबरा कर अपनी गठरी उठाने के लिए कि कहीं और कोई पहले न उठा ले, अन्यथा मुश्किल में पड़ जाऊंगा, क्योंकि गठरियां सब बराबर थीं। अब उसने सोचा कि अपनी गठरी है, ठीक है। कम से कम परिचित दुख तो हैं उसके भीतर। दूसरे की गठरी के भीतर पता नहीं कौन से अपरिचित दुख हैं। परिचित दुख फिर भी कम दुख हैं—जाना-माना, पहचाना। घबराहट में दौड़कर अपनी गठरी उठा ली कि कोई और दूसरा उसकी न उठा ले। लेकिन जब उसने घबराहट में उठाकर चारों तरफ देखा तो उसने पाया कि सारे लोगों ने दौड़कर अपनी ही गठरी उठा ली है, किसी ने किसी की नहीं उठाई। उसने पूछा कि इतनी

जल्दी क्यों कर रहे हो उठाने की ? तो उन्होंने कहा कि हम डर गए। अब तक हम यही सोचते थे कि सारे लोग सुखी हैं, हमीं दुखी हैं। उसने जिससे पूछा, उस भवन में, उन्होंने यही कहा कि मैं यही सोचता था कि सारे लोग सुखी हैं। हम तो तुम्हें भी सुखी समझते थे, तुम भी रास्ते पर मुस्कुराते हुए निकले थे। हमने कभी सोचा नहीं था कि तुम्हारे भीतर भी इतनी गठरी भर दुख हैं। उस फकीर ने पूछा, आपने अपनी क्यों उठा ली, बदल क्यों नहीं ली। उन्होंने कहा, हम सबने प्रार्थना की थी भगवान से आज रात कि हम अपनी गठरियां बदलना चाहते हैं दुखों की। मगर हम डर गए। हमें खयाल भी न था कि सबके दुख बराबर हो सकते हैं। फिर हमने सोचा कि अपनी ही उठा लेना अच्छा है। पहचान की है, परिचित है और नये दुखों में कौन पड़े। पुराने दुख के धीरे-धीरे लोग आदी हो जाते हैं। उस रात किसी ने भी किसी की गठरी न चुनी। फकीर की नींद टूट गई, उसने भगवान को धन्यवाद दिया कि तेरी बड़ी कृपा है कि मेरा ही दुख मुझे वापस मिल गया, अब मैं कभी ऐसी प्रार्थना नहीं करूंगा।

असल में एक गणित है, दूसरे के चेहरे हमें दिखाई पड़ते हैं और अपनी असलियत दिखाई पड़ती है और तब बड़ी भूल हो जाती है। जिन्दगी और मृत्यु के सम्बन्ध में भी वही भूल का गणित काम कर रहा है, दूसरे मरते दिखाई पड़ते हैं। अपने को तो मरते कभी नहीं जाना। दूसरे की तो मृत्यु दिखाई देती है और भीतर उनके कुछ बचता है या नहीं, हमें कुछ पता नहीं चलता। और जब हम मरते हैं तब हम बेहोश हो जाते हैं, इसलिए मृत्यु अपरिचित रह जाती है। इसलिए जरूरी है कि हम अपनी स्वेच्छा से मृत्यु में उतरें; और एक बार जो मृत्यु के दर्शन कर लेता है वह मृत्यु से मुक्त हो जाता है, मृत्यु का विजेता हो जाता है। विजेता कहना बेकार है, क्योंकि कुछ बचता ही नहीं है जीतने को, मृत्यु असत्य हो जाती है, मृत्यु रहती ही नहीं। जैसे कोई आदमी दो और दो जोड़कर पांच लिख दे और फिर कल उसको समझ में आ जाय कि दो और दो चार है, तो वह क्या कहेगा ? यह कि मैंने पांच को जीत कर चार बना दिया है ? वह कहेगा, जीत का सवाल ही नहीं था, पांच था ही नहीं, गलत था मेरा हिसाब। हिसाब तो चार ही था, मैं पांच समझ रहा था, वह मेरी भूल थी। भूल दिख गई, बात खत्म हो गई। फिर क्या वह आदमी यह कहेगा कि मैं पांच से कैसे छुटकारा पाऊं क्योंकि अब दो और दो चार हो रहे हैं, लेकिन पांच मैंने जोड़े थे। अब मैं कैसे उससे

मुक्त होऊं ? वह आदमी पूछने नहीं जायेगा मुक्ति के लिए, क्योंकि जैसे यह दिख गया है दो और दो चार हैं, बात खत्म हो गई, पांच रहे ही नहीं। **मुक्त किससे होना है ? मृत्यु से न तो मुक्त होना है और न मृत्यु को जीतना है। मृत्यु को जानना है। जानना ही मुक्ति बन जाती है, जानना ही जीत बन जाती है, इसलिए मैंने पहले कहा कि ज्ञान शक्ति है, ज्ञान मुक्ति है, ज्ञान विजय है।**

मृत्यु का ज्ञान मृत्यु को विलीन कर देता है तब अनायास ही हम पहली बार जीवन से संबंधित हो पाते हैं। इसलिए ध्यान के संबंध में मैंने एक बात यह कही कि ध्यान स्वेच्छा से मृत्यु में प्रवेश है और दूसरी बात यह कहना चाहता हूं, जो स्वेच्छा से मृत्यु में प्रवेश करता है, अनायास ही जीवन में प्रविष्ट हो जाता है। वह जाता तो है मृत्यु को खोजने, लेकिन मृत्यु को नहीं पाता है, वहां परम जीवन को पा लेता है। वह जाता तो है मृत्यु के भवन में खोज करने, लेकिन पहुंच जाता है जीवन के मंदिर में। और जो मृत्यु के भवन से भागता है वह जीवन के मंदिर में नहीं पहुंच पाता है। क्या मैं आपसे कहूं, कि जीवन का जो मंदिर है, उसकी दीवाल पर मृत्यु की छायाओं के चित्र खुदे हैं ? क्या मैं आपसे कहूं, जीवन का जो मंदिर है, उसकी दीवाल पर मौत के नक्शे बने हैं और हम मौत से भागने की वजह से जीवन के मंदिर से भी भागते रहते हैं, क्योंकि हम जब मौत को राजी हो जायें तो हम दीवालों के लिए राजी हो जायें। भीतर प्रवेश करें तो हम जीवन के मंदिर में पहुंच जायें। जीवन का तो देवता है और मृत्यु की दीवालें हैं। जीवन का तो मंदिर है और मृत्यु के द्वार-दरवाजों पर सब तरफ चित्र खुदे हैं, हम उन्हीं को देखके भागते रहे हैं। अगर आप कभी खजुराहो गये हैं तो एक अद्‌भुत बात दिखाई पड़ेगी कि खजुराहो के मंदिरों में चारों तरफ मंदिर के सेक्स की, मैथुन की प्रतिमाएं खुदी हैं--नग्न और अश्लील दिखायी पड़ती हैं। अगर कोई आदमी उनको देखकर ही भाग जाय तो भीतर के मंदिर तक परमात्मा तक नहीं पहुंच पायेगा। भीतर परमात्मा की प्रतिमा है और बाहर काम की, वासना की, मैथुन की सारी प्रतिमाएं खुदी हैं। बड़े अद्‌भुत लोग थे जिन्होंने खजुराहो के मंदिर बनाये होंगे। उन्होंने जीवन की एक गहरी बात खोद दी। उन्होंने कहा, बाहर दीवाल पर तो सेक्स है और अगर दीवाल से ही भाग गये, तो ब्रह्मचर्य भीतर है और अगर दीवालों के भीतर प्रवेश कर गये, तो ब्रह्मचर्य को भी उपलब्ध हो जाओगे। और बाहर की दीवालों पर तो संसार

है और अगर संसार से भी भागते रहे तो परमात्मा तक कभी न पहुंच पाओगे; क्योंकि संसार की दीवालों के भीतर जो बैठा है वह परमात्मा है। ठीक वही मैं आपसे कहता हूं, कहीं न कहीं गांव में एक मंदिर बनाना चाहिए जिसकी दीवालों पर तो मौत हो और भीतर जीवन का देवता बैठा हो। ऐसा ही सत्य है। लेकिन हम मौत से भागते हैं तो जीवन के देवता से भी वंचित रह जाते हैं। तो ये दोनों बातें एक साथ कहता हूं।

स्वेच्छा से मृत्यु में प्रवेश ध्यान है और जो स्वेच्छा से मृत्यु में प्रवेश करता है वह जीवन को उपलब्ध हो जाता है—यानी जो मृत्यु का साक्षात्कार करने जाता है अंततः पाता है कि मृत्यु तो विलीन हो गयी है और जीवन से आलिंगन हो गया है। बड़ी उल्टी बातें हैं, बड़ा उल्टा मालूम होता है—मृत्यु को खोजने जायं और जीवन मिल जाय। लेकिन उल्टा नहीं है। मैं वस्त्र पहने हुए हूं, अगर मुझे खोजने आयेंगे तो पहले तो मेरे वस्त्र ही मिलेंगे। वस्त्र मैं नहीं हूं और अगर मेरे वस्त्र से ही डर गये और भाग गये तो मेरा कभी भी पता नहीं चल पायेगा; लेकिन अगर मेरे वस्त्रों से न डरे और निकट आये, और निकट आये तो मेरे वस्त्रों के भीतर मेरा शरीर··· लेकिन शरीर भी और गहरे अर्थों में वस्त्र है और अगर मेरे शरीर से ही दूर भाग गये तो फिर मेरे शरीर के भीतर जो बैठा है वह न मिल सकेगा। और अगर शरीर से भी न डरे और शरीर को वस्त्र मानकर और भीतर यात्रा की, तो भीतर वह बैठा हुआ है जिससे मिलने की सबको आकांक्षा है। कैसा मजा है, शरीर की दीवाल है और आत्मा का देवता भीतर विराजमान है। ये उल्टी बातें हैं—दीवाल पदार्थ की और देवता जीवन का। अगर इसे ठीक से समझ लें तो मृत्यु की दीवाल है और जीवन का देवता है।

ऐसे ही कई बार चित्रकार चित्र बनाता है। अगर सफेद रंग उभारना हो तो काले रंग की चारों तरफ पृष्ठभूमि दे देता है। काले रंग की पृष्ठभूमि में सफेद रेखाएं उभरकर दिखायी पड़ने लगती हैं। अगर कोई काले से डर जाय तो वह सफेद तक पहुंच ही न पाये। लेकिन उसे पता नहीं कि काला सफेद को उभार जाता है। गुलाब में कांटे लगे हैं और फूल खिले हैं। अगर कोई कांटे से डर जाय तो फूल तक कभी भी नहीं पहुंच पायेगा। भागता रहेगा कांटों से तो फिर फूल से भी वंचित रह जायगा, लेकिन जो कांटों के लिए राजी हो जाय और पास पहुंच जाय और डर छोड़ दे, वह हैरान हो जाता है कि कांटे सिर्फ फूल की रक्षा करते हैं, सिर्फ उसके बाहर

की दीवाल बना रहे हैं, रक्षा की दीवाल। बीच में फूल खिले हैं और कांटे और फूल में दुश्मनी नहीं है। फूल भी कांटे के अंग हैं। एक ही पौधे की रसधार से दोनों का आना हुआ है। **जिसे हम जीवन कह रहे हैं वह जीवन और जिसे हम मृत्यु कह रहे हैं वह मृत्यु दोनों एक ही महाजीवन के अंग हैं।** मैं श्वास ले रहा हूं। एक श्वास बाहर आती है, वही फिर थोड़ी देर में भीतर जाती है। जो भीतर जाती है, वह थोड़ी देर में बाहर हो जाती है। **श्वास का आना जीवन है, श्वास का जाना मृत्यु है। लेकिन दोनों एक ही महा जीवन के कदम हैं—दायें और बायें और दोनों साथ-साथ चलते रहते हैं। जन्म एक कदम है, मृत्यु दूसरा कदम है लेकिन अगर हम देख पायें, उतर पायें भीतर, तो महा जीवन का दर्शन हो जाता है।** इधर इन तीन दिनों में ध्यान का जो प्रयोग हम करने जा रहे हैं वह मृत्यु में प्रवेश का प्रयोग है। उसके बहुत से पहलुओं के संबंध में मैं आपसे बात करूंगा। अभी आज रात पहले दिन के प्रयोग में जो हम बैठेंगे, उस संबंध में थोड़ी-सी बातें समझा दूं।

मेरी दृष्टि आपके खयाल में आ गयी है कि हमें उस जगह जाना है जहां मरने का कोई उपाय नहीं रह जाता है—भीतर और भीतर। और बाहर की वह सारी खोल ऊपर छोड़ देनी है जो मृत्यु पर छूट जाती है। मृत्यु में शरीर छूट जाता है, भाव छूट जाते है विचार छूट जाते हैं, मित्रता छूट जाती है, शत्रुता छूट जाती है। बाहर की दुनिया तो सब छूट जाती है, रह जाते हैं सिर्फ अकेला हम, सिर्फ मैं रह जाता हूं, सिर्फ चेतना रह जाती है ऊपर। तो ध्यान में भी हमें सब छोड़कर मर जाना है और सिर्फ इतना ही रह जाय। मैं जानता हुआ दृष्टा मात्र रह जाऊं। भीतर तो मृत्यु घटित हो जायगी और इन तीन दिनों के अन्दर अगर अपने को छोड़ने और मरने की हिम्मत दिखायी, तो वह घटना घट जायगी जिसको समाधि कहते हैं। यह ध्यान रहे, समाधि शब्द बड़ा अद्भुत है। **ध्यान की पूर्णता को भी समाधि कहते हैं और कोई आदमी मर जाता है तो उसकी कब्र को भी समाधि कहते हैं।** कभी खयाल किया है ? इन दोनों को समाधि कहते हैं। असल में इन दोनों में राज है, रहस्य है, मिला हुआ अर्थ है। असल में जो आदमी समाधि को उपलब्ध होता है, उसका शरीर कब्र ही रह जाता है और कुछ नहीं रह जाता है। वह जानता है, भीतर कोई और ही है, बाहर तो सिर्फ अंधेरा है। जैसे कोई आदमी मर जाता है, हम उसकी कब्र बना देते हैं और कहते हैं—

समाधि है, लेकिन वह समाधि दूसरे बनायेंगे और इसके पहले कि दूसरे हमारी समाधि बनायें, अगर हम अपनी समाधि बना सकें, तो जीवन में वह घटना घट जाती है जिसके लिए हम प्यासे हैं। दूसरे की समाधि बनाने का तो मौका मिलेगा ही, लेकिन हो सकता है, हम अपनी समाधि न बना पायें। अगर हम अपनी समाधि बना लें तो फिर सिर्फ शरीर ही मरेगा, मेरे मरने का कोई सवाल ही नहीं। मैं कभी भी न मरा हूं, न मर सकता हूं। कोई भी कभी नहीं मरा है, न मर सकता है। लेकिन इसे जानने में मृत्यु की सारी सीढ़ियां उतरनी पड़ेंगी। तो तीन सीढ़ियां मैं आपको बताना चाहता हूं और अभी हम प्रयोग भी करेंगे। कौन जाने इस तट पर वह घटना घट जाय और आपकी समाधि बन जाय! वह समाधि नहीं, जो दूसरे बनाते हैं, वह जो स्वेच्छा से आप निर्मित कर लेते हैं।

तीन चरण हैं। पहला चरण तो है शरीर की शिथिलता। शरीर को इतना शिथिल छोड़ देना है कि ऐसा लगने लगे कि वह दूर ही पड़ा रह गया। हमारा उससे कुछ लेना-देना नहीं है। शरीर से सारी ताकत को भीतर खींच लेना है। हमने शरीर में ताकत डाली हुई है। जितनी ताकत हम शरीर में डालते हैं उतनी पड़ती है, जितनी हम खींच लेते हैं उतनी खिंच जाती है। आपने कभी खयाल किया है ? किसी से झगड़ा हो जाय तो आपके शरीर में ज्यादा ताकत कहां से आ जाती है और आप इतना बड़ा पत्थर उठाकर फेंक सकते हैं क्रोध की हालत में, जितना बड़ा पत्थर आप शांति की हालत में हिला भी नहीं सकते हैं। कभी आपने सोचा है, यह ताकत कहां से आ गई ? यह ताकत आप डाल रहे हैं। जरूरत पड़ गई है, खतरा है, मुसीबत है, दुश्मन सामने खड़ा है। पत्थर को उठायें, नहीं तो जिन्दगी खतरे में पड़ जायगी। तो आप अपनी सारी ताकत डाल देते हैं शरीर में।

एक बार ऐसा हुआ कि एस आदमी दो वर्षों से पैरेलाइज्ड था, लकवा लग गया था और पड़ा था अपनी खाट पर—उठ नहीं सकता था, हिल नहीं सकता था। डाक्टर इलाज कर-करके परेशान हो गये और कह दिया कि जिन्दगी भर पक्षाघात ही रहेगा। फिर अचानक एक रात उस आदमी के घर में आग लग गई। सारे लोग घर के बाहर भागे। तब उन्हें खयाल आया कि अपने परिवार के प्रमुख को तो भीतर छोड़ आए हैं—बूढ़े को। वह तो भाग नहीं सकता, उसका क्या होगा। लेकिन अंधेरे में कुछ लोग मशालें लेकर आये तो देखा कि बूढ़ा उनके पहले निकल आया। उन सबने पूछा, क्या आप चल

कर आए ? उसने कहा, अरे ! और वहीं खाट पर आकर गिर पड़ा। उसने कहा, मैं तो चल ही कैसे सकता हूं ! यह कैसे हुआ ? लेकिन चल चुका था वह, कैसे हुआ का सवाल ही न था। आग लग गई थी घर में, सारा घर भाग रहा था। एक क्षण में वह भूल गया कि मैं लकवा का बीमार हूं। सारी शक्ति वापस शरीर में उसने डाल दी, लेकिन बाहर आकर जब मशाल जली और लोगों ने देखा, आप ! आप बाहर कैसे आये ? उसने कहा, अरे ! मैं तो लकवे का बीमार हूं। वह वापस गिर पड़ा, उसकी शक्ति फिर पीछे लौट गई। अब उसकी ही समझ के बाहर है, यह घटना घट गई। उसे सब समझा रहे हैं कि तुम्हें लकवा नहीं है, क्योंकि तुम इतना चल सकते हो और अब तुम जिन्दगी भर चल सकते हो। लेकिन वह कहता है कि मेरा तो हाथ भी नहीं उठता है, पैर भी नहीं उठता है। यह कैसे हुआ, मैं भी नहीं कह सकता। उसे पता नहीं कि खतरे की हालत ने सारी शक्ति उसकी आत्मा में डाल दी और यह भी उसका भाव है कि उसने शक्ति सारी फिर अपने भीतर खींच ली। और ऐसा लकवे के एकाध मरीज के साथ हुआ हो ऐसा नहीं है, ऐसी सैकड़ों घटनाएं पृथ्वी पर घटी हैं, जबकि लकवे का आदमी बाहर आ गया है। आग लगने की हालत में या कोई खतरे की हालत में भूल गया है कि मैं किस हालत में हूं।

मैं आपसे यह कह रहा हूं कि शरीर में हमारी शक्ति डाली हुई है, लेकिन निकालने का हमें कोई पता नहीं कि हम वापस कैसे निकालें। रात इसीलिए हमें आराम मिल जाता है कि अपने आप शक्ति वापस चली जाती है भीतर और शरीर शिथिल होकर पड़ जाता है। सुबह फिर हम ताजे हो जाते हैं। **ध्यान के लिए पहला मृत्यु में प्रवेश का जो चरण है, वह शरीर से सारी शक्ति को निकालना है।** अब यह बड़े मजे की बात है कि सिर्फ भाव करने से शक्ति वापस लौट जाती है। अगर थोड़ी देर तक कोई मन में यह भाव करता रहे कि मेरी शक्ति अन्दर वापस लौट रही है और शरीर शिथिल होता जा रहा है, तो वह पायेगा कि शरीर शिथिल हो गया है और शरीर उस जगह पहुंच जायेगा कि खुद ही अपना हाथ उठाना चाहेंगे तो नहीं उठा सकेंगे, सब शिथिल हो जायगा। यह हमारा भाव है जो हम शरीर से वापस खींच सकते हैं। तो, पहली तो बात है शरीर से सारे प्राण का भीतर वापस पहुंच जाना। तो शरीर खोल की तरह पड़ा रह जायगा और बार-बार ऐसा दिखाई पड़ेगा कि नारियल में फासला पड़ गया है। हम अलग हो गये हैं और शरीर की खोल बाहर पड़ी है वस्त्रों की भांति।

फिर दूसरी बात है, **श्वास को शिथिल छोड़ना।** श्वास और गहरे में हमारे प्राणों को पकड़े हुए है, इसलिए श्वास टूटते ही आदमी मर जाता है। श्वास और गहरे में हमें शरीर से जोड़े हुए है। श्वास शरीर और आत्मा के बीच सेतु है इसलिए श्वास को हम प्राण कहते हैं। वह गई कि प्राण गये, लेकिन बहुत प्रयोग इस सम्बन्ध में होते हैं और अगर कोई व्यक्ति अपनी श्वास को पूरा शिथिल छोड़ दे, तो धीरे-धीरे श्वास उस जगह आ जाती है कि भीतर पता ही नहीं चलता है कि श्वास चल रही है कि नहीं चल रही है। कई बार शक हो जाता है कि कहीं मैं मर तो नहीं गया। यह श्वास चल नहीं रही है, हुआ क्या है ? श्वास इतनी शांत हो जाती है कि पता ही नहीं चलता कि चल रही है या नहीं चल रही है। अगर एक क्षण के लिए भी श्वास ठहर जाती है, ठहराना नहीं है, क्योंकि जिसने ठहराया है उसकी श्वास कभी नहीं ठहरेगी। ठहराया कि बाहर निकलने की कोशिश करेगी। अगर बाहर रोका तो तुरंत भीतर जाने की कोशिश करेगी, इसलिए मैं कह रहा हूं, अपनी तरफ से कुछ भी नहीं करना है, सिर्फ शिथिल छोड़ते जाना है—शांत...शांत.. शांत...। धीरे-धीरे श्वास एक बिन्दु पर आकर ठहर जाती है और एक क्षण को भी ठहर जाय, तो उसी क्षण आत्मा और शरीर के बीच अनन्त फासला दिखाई पड़ जाता है। जैसे बिजली चमक जाय अभी और मुझे आप सबके चेहरे दिखलाई पड़ जायें एक क्षण में, फिर बिजली खो जाय लेकिन फिर मैंने आपके चेहरे देख लिए। ठीक एक क्षण को जब श्वास बिल्कुल मध्य में ठहर जाती है, तो एक क्षण के लिए बिजली कौंध जाती है पूरे व्यक्तित्व में और दिखाई पड़ जाता है कि शरीर अलग, मैं अलग। मृत्यु घटित हो गई। **तो दूसरे तल पर श्वास को शिथिल छोड़ना है।** क्योंकि तीसरे तल पर मन को शिथिल छोड़ना है, क्योंकि अगर श्वास भी शिथिल हो जाय और मन शिथिल न हो पाये तो बिजली कौंध जायेगी, लेकिन आपको दिखाई नहीं पड़ेगा कि क्या हुआ; क्योंकि मन तो अपने विचार में उलझा रहेगा। अगर यहां बिजली चमक जाय और मैं अपने खयालों में खोया रहूं तो बिजली चमक जायगी तब मुझे पता चल जायगा, अरे ! कुछ हो गया, लेकिन तब तक बिजली चमक चुकी है और मैं अपने विचारों में खोया रह गया हूं। बिजली तो चमक जायेगी श्वास के ठहरते ही, लेकिन उस पर ध्यान तभी जायगा जब विचार भी बन्द हो गया हो, नहीं तो ध्यान नहीं जायेगा और मौका चूक जायेगा। **इसलिए तीसरी चीज है— विचार को शिथिल छोड़ देना।**

●●●

युक्रांद के लिए विशेष :

बुद्ध और क्राइस्ट की अवतार परंपरा में भगवान रजनीश

मुक्त आत्मा लामा कर्मपा की घोषणा

(प्रस्तुत अंश स्वामी गोविन्द सिद्धार्थ, बम्बई की ओर से युक्रांद के लिए विशेष रूप से भेजा गया है। अभी हाल ही में ६ जून ७२ को स्वामी जी ने एक तिबेतन मानेस्ट्री—तिब्बती मठ—जो हिमालय पर्वत शृंखला में स्थित है, की यात्रा की थी, जहाँ लामा कर्मपा से उनकी भेंट हुई। लामा कर्मपा तीन तिबेतन अवतार चेतनाओं में से एक हैं, जिनका जन्म अन्य साधक आत्माओं की मुक्ति के लिए हुआ है। उसी क्रम में यह विवरण प्रस्तुत है।)

मेरी इस मानेस्ट्री में उपस्थिति भगवान के प्रतिनिधि के रूप में मानी गई और मुझे आत्मीय सौहार्द प्राप्त हुआ। मुक्त आत्मा लामा ने भगवान का लाकेट अपने हाथ में लिया और अपने माथे से लगाकर नमन् किया। तत्पश्चात् कहा : "बुद्ध के बाद भगवान रजनीश भारत के महान् अवतार हैं और बुद्ध जैसे ही हैं। (He is the Greatest Incarnation Since Buddha In India & is Just Like Buddha !) " मुक्त आत्मा लामा ने कहा : "भगवान ही केवल एक मात्र जीवित पुरुष हैं जो कि 'विश्व-गुरु' हो सकते हैं, लेकिन वे क्या हैं, इसे बहुत ही थोड़े लोग जान सकते हैं।"

लामा ने भगवान के पिछले जन्म पर बताया और कहा कि वे तिब्बत के ईश्वरीय अवतार रहे हैं और उनकी दो जन्म-पूर्व की स्वर्ण-प्रतिमा तिब्बत में गुप्त रूप से ९९ ईश्वरीय अवतारों की स्वर्ण प्रतिमाओं के साथ सुरक्षित है।

आगे अब हम स्वामी गोविन्द सिद्धार्थ जी के साथ जो साक्षात्कार बम्बई में नव-संन्यासिनियों—मा आनन्द प्रेम और मा योग तरु—के द्वारा लिया गया है, प्रस्तुत कर रहे हैं।

प्रश्नकर्त्ता : स्वामी जी, क्या आप तिब्बती मानेस्ट्री के लामा श्री कर्मपा से अपनी भेंट के सम्बन्ध में विस्तार से बतायेंगे ?

स्वामी जी : दार्जिलिंग में अनेक मानेस्ट्रीज हैं। जब कोई दार्जिलिंग पहुंचने को होता है, रास्ते में बहुत-सी मानेस्ट्रीज दिखाई देती हैं। बहुत बार मैंने भगवान से तिब्बती रहस्य और उनकी अध्यात्म साधना तथा ध्यान की विधियों के सम्बन्ध में जो कि तिब्बती साधकों ने बुद्ध परंपरा से ग्रहण की हैं, चर्चाओं के अन्तर्गत सुना है। अतः मेरी जिज्ञासा, जब मैं दार्जिलिंग की यात्रा पर था, तिब्बती मानेस्ट्रियों को देखने की थी।

पर्यटक कार्यालय से मुझे ज्ञात हुआ कि सिक्किम की राजधानी गेन्गटोक के पास रुमटेक (Rumtek) में एक अद्‌भुत मानेस्ट्री है, जिसका संचालन मुक्त आत्मा लामा कर्मपा द्वारा होता है। मैं इस मानेस्ट्री को देखने के लिए बहुत उत्सुक हुआ और उसे देखने के लिए निकला।

यह मानेस्ट्री हिमालय पर्वत श्रृंखला की ५,००० फुट ऊंची चोटी पर गेन्गटोक से २५ मील की दूरी पर स्थित है। इसी मानेस्ट्री के समीप ही कंचनजंगा की प्रसिद्ध चोटी है।

इस मानेस्ट्री में २०० तिब्बती साधु स्थायी रूप से रहते हैं जो कि लामा कहलाते हैं। मानेस्ट्री में कोई भी तब तक प्रवेश नहीं पाता, जब तक कि वह संसार नहीं छोड़ता है। लामा का अर्थ ही यह है कि जिसने सांसारिक जीवन को त्यागा हो और संन्यासी हो गया हो।

एक नव-संन्यासी की लामा से भेंट

लामा कर्मपा से मेरी भेंट बड़ी ही रहस्यमय ढंग से हुई। मुझे ऐसा लगता है कि जब मैं उनकी मानेस्ट्री में गया, तब जैसे वे मेरी प्रतीक्षा में ही थे। तभी तो ज्यों ही उनका एक लामा मेरा नाम लेकर उनके पास गया, उन्होंने मुझे एकदम बुला भेजा।

जाते ही मैंने मुक्त आत्मा लामा कर्मपा के चरण छुए। उन्होंने अपने दोनों हाथ मेरे सिर पर रखे। तिब्बती परंपरा में सिद्ध लामा का ऐसा संकेत बहुत आध्यात्मिक मूल्य रखता है। सामान्यतः ऐसा होना बहुत ही कठिन है।

लामा कर्मपा क्या हैं ?

तिब्बती साधक लामा कर्मपा को " दिव्य अवतार " की परंपरा में जानते हैं। अभी जो तीन तिब्बती मुक्त आत्मायें जीवित हैं, उनमें से एक लामा कर्मपा हैं। बुद्ध के समय में ही बहुत से व्यक्तियों को बोध उपलब्ध हुआ और उन्हीं में से कुछ चेतनाओं ने अन्य साधकों की मुक्ति के लिए जन्म लिया। इन्हें बोधिसत्व या जाग्रत आत्मायें (जो स्वयं मुक्त हो गई हैं और दूसरों की मुक्ति के लिए आई हैं) कहते हैं इन बोधि-सत्व में से ही लामा कर्मपा हैं। दलाई लामा प्रधान लामा हैं।

लामा कर्मपा का वर्णन करते-करते स्वामी गोन्विद सिद्धार्थ जी भाव-विभोर और आश्चर्य मिश्रित ढंग से कहते हैं : एक बात जो बहुत ही आनंद-पूर्ण है कि **लामा कर्मपा ठीक भगवान-जैसे ही दिखते हैं—बिल्कुल ठीक वैसे ही—इतने ही विनोद-प्रिय, आनन्दमय और दिव्य !** लामा की उम्र भी समान ही है—४० और ५० के बीच। मुक्त आत्मा लामा के माथे के बीच में तीसरे नेत्र को सहज ही देखा जा सकता है। यह सामान्य आंख जैसा प्रतीत होता है, लेकिन यह अंतःचक्षु है। लामा से जानकारी लेने पर विदित हुआ कि जैसे ही यह तीसरा नेत्र खुलता है, वैसे ही बहुत से आंतरिक बोध बढ़ जाते हैं जो सामान्यतः ज्ञात नहीं होते हैं।

● एक अनोखी बात जो इस संदर्भ में कह दूं कि जैसे ही मैं मानेस्ट्री में प्रविष्ट हुआ, लामा ने कहा : " मैं जानता हूं, तुम कहां से आ रहे हो ? " और आगे कहा : " मैं देखता हूं कि तुम्हारे पास कोई दोनों ओर छपा हुआ तुम्हारे गुरु का फोटोग्राफ है। " उस समय मैं माला के लाकेट में प्रिन्ट फोटोग्राफ का विस्मरण कर बैठा था, इससे मैंने कहा : "नहीं, ऐसा तो कुछ भी नहीं।" लेकिन तभी लामा की शिष्या एक अंग्रेज महिला ने जो दुभाषिये का कार्य कर रही थी (कारण कि लामा केवल तिब्बती भाषा ही जानते हैं और मैं अंग्रेजी में संवाद कर रहा था), मेरी माला में पड़ा लाकेट देखा और कहा : " यह क्या है ? " तब मुझे खयाल आया और लामा की बात सच हुई।

भगवान के सम्बन्ध में : " बुद्ध के बाद महान् अवतरण "

लामा ने भगवान का लाकेट अपने हाथ में लिया और अपने माथे पर लगाकर नमन् किया, और कहा : " बुद्ध के बाद भगवान महान् अवतार

हैं—भारत के और बुद्ध जैसे ही हैं ? " मैं यह सुनकर बहुत उत्सुक हुआ और जिज्ञासा की, कि : " भारत में और भी लोग हैं, जो कहते हैं कि उन्हें बोधि उपलब्ध हुई है, उनके संबंध में आप क्या कहते हैं ? " उन्होंने कहा : " वे 'मुक्त-आत्मायें' हैं लेकिन जाग्रत अवतार (Enlightened Incar nations) नहीं । "

तब मैंने विशेषतः कृष्णमूर्ति के सम्बन्ध में पूछा । उन्होंने कहा : "पहले तो, वे भारत में नहीं हैं। दूसरे, वे मुक्त आत्मा (Realised Soul) हैं—दिव्य अवतरण (Divine Incarnation) नहीं । " मुक्त आत्मा और दिव्य अवतरण पर अपना संकेत स्पष्ट करते हुए लामा ने कहा : " मुक्त आत्मा स्वयं तो अपने अस्तित्व से एक हो जाती है और जन्म-मरण के बंधन से छूट जाती है, लेकिन जरूरी नहीं है कि वह दूसरों को भी वहां तक पहुंचा सके । दिव्य अवतरण जबकि मामला ही दूसरा है । उस अवस्था में वह स्वयं तो मुक्त होती है, लेकिन दूसरों को भी उस स्थिति में पहुंचाने का इंगित करती है और पहुंचाती है । इसके लिए मुक्त आत्मा को पहले के जन्मों में गुह्य आध्यात्मिक पद्धतियों में दीक्षित होना पड़ता है । " भगवान रजनीश के सम्बन्ध में उन्होंने कहा कि वे दिव्य अवतार हैं और उन्होंने अपना यह जन्म जानकर ही करुणावश अन्य साधकों की मुक्ति के लिए लिया है । इस संदर्भ में मैंने (स्वामी गोविन्द सिद्धार्थ ने) अपनी सहमति व्यक्त की और कहा कि भगवान से इंगित पाकर बहुत से साधक मुक्ति की ओर चल पड़े हैं और मुक्ति-यात्रा प्रारंभ हो गई है—संभावना है, अनेक साधकों को भगवान की करुणा और आशीष से जन्म-मरण से मुक्ति मिले ।

बहुत कम जान पायेंगे कि भगवान क्या हैं ?

लामा कर्मपा ने तब आगे कहा : "आप लोग समझते होंगे कि वे केवल आपके लिए ही बोलते हैं, लेकिन ऐसा नहीं है । भगवान आकाशी रिकार्ड्स (Akashic Records) के लिए जो सूक्ष्म जगत है (Astral Planes) उसके लिए भी बोलते हैं । जो बोला जा रहा है वह भुलाया नहीं जायेगा । आपने पाया होगा कि भगवान बार-बार वही दोहराते हैं और दोहराते चले जायेंगे और आपको लगेगा कि वे आपके लिए बोल रहे हैं, लेकिन वास्तव में वे बहुत थोड़े व्यक्तियों के लिए बोल रहे हैं । **बहुत थोड़े व्यक्ति ही अहसास कर पायेंगे कि भगवान क्या हैं !** उनके शब्द आकाशी रिकार्ड्स (Akashic

Records) में रहेंगे, जिससे कि भविष्य में आने वाले लोगों को सहायता मिले ।"

लामा कर्मपा और भगवान पिछले जन्मों में साथ रहे हैं । और मुझे ऐसा लगा, जैसे लामा अभी भी भगवान के साथ हैं । यह प्रतीति ठीक निकली जब लामा ने कहा कि वे और भगवान टेलीपैथिकली (Telepathically) साथ हैं । लामा ने भगवान का जन्म-स्थल जानना चाहा और जब मैंने बताया कि 'मध्य-प्रदेश' तो ऐसा लगा कि वे पहले ही से जान रहे हों ।

भगवान की ध्यान-साधना पद्धति सर्वथा उपयुक्त

लामा ने मेरे से ध्यान-साधना पद्धति के सम्बन्ध में पूछा । मैंने उन्हें सक्रिय ध्यान-साधना पद्धति के चारों चरण बताए । जब मैं तीसरे चरण "हू—महामंत्र" के सम्बन्ध में बता रहा था तो उन्होंने कहा कि यह 'हू' तिब्बती मंत्र 'हुम' (Hum) से आया है जो कि पूरा इस प्रकार है : 'Om Mani Padme Hum' । ध्यान-साधना पर लामा इतने उत्सुक हुए कि उन्होंने मेरे दोनों हाथ अपनी ओर खींच लिए और बहुत ही प्रसन्न होकर बोले : "यह पद्धति सर्वथा उपयुक्त है और तिब्बती ध्यान-साधना से मिलती है । हम यहां जो कार्य कर रहे हैं ठीक वैसा ही आप लोग कर रहे हैं ।"

यद्यपि, तिब्बती लामाओं की साधना-पद्धति बहुत कुछ ध्वनि-तरंगों (Vibrations) पर केन्द्रित है । यही कारण है कि वे विशेष स्वरों में प्रार्थना और मन्त्र-उच्चारण करते हैं ।

मानेस्ट्री के भीतर अवलोकन

इस मानेस्ट्री में एक बृहत् मैदान है जिसके चारों ओर साधकों के छोटे-छोटे कमरे हैं जहां पर कि साधक लामा रहते हैं । मैदान के मध्य में तीन स्टोरी कमरे हैं, जहां पर कि पहला कमरा प्रार्थना-कक्ष है, इसी में साधक लामा प्रार्थना करते हैं । तिब्बती मानेस्ट्री में स्वर्ण का प्रयोग धार्मिक कार्यों में बहुत होता है । स्वर्ण को धार्मिक कार्यों में बहुत पवित्र माना जाता है, और यह तिब्बत में नदियों के किनारे बहुतायत से मिलता है। यही कारण है कि मानेस्ट्री बहुत समृद्ध प्रतीत होती है ।

तिब्बती साधना में तरंगों का केन्द्रीय अर्थ है । उनका कहना है कि मनुष्य का अस्तित्व तरंगों से है । इसीलिये प्रार्थना और मंत्र-उच्चारण का पूरा विज्ञान तिब्बती साधना में है। ध्यान में गहराई में जाने के लिये और जाग–

तिक-सत्ता के अस्तित्व में जाने के लिए तथा मन की अशान्त तरंगों को शान्त करने के लिए विशेष मन्त्र-उच्चारण की साधना है।

मानेस्ट्री में प्रवेश करते ही आपको शक्तिशाली तरंगों का अनुभव होता है कारण कि लामा साधक हमेशा ही वहां प्रार्थना और मंत्र-उच्चारण करते रहते हैं। लामा साधकों को वस्त्र, भोजन और निवास की सुविधा मानेस्ट्री से मिलती है, इससे उनको किसी प्रकार की चिन्ता नहीं होती और उन्हें सारा समय ध्यान-साधना के लिए मिलता है। ध्यान ही यहां के लामा-साधकों का मुख्य लक्ष्य है। मानेस्ट्री में जाते ही ध्यान का आधा कार्य पूरा हो जाता है बिना किसी ध्यान के अभ्यास के, क्योंकि वहां की तरंगें वैसी हैं। मैंने स्वयं यह अनुभव किया है।

लामा-साधक जो प्रार्थना करते हैं, उस समय विशेष प्रभाव पैदा करने के लिए विशेष तरह की सुगन्धियों का प्रयोग करते हैं। साधना में गति देने के लिए ये सुगन्धियां सहयोगी होती हैं।

तरंगों की विशेष व्यवस्था करने हेतु मानेस्ट्री में सात धातुओं की बनी घंटियां हैं जिनसे खास तरह की तरंगों का निर्माण होता है। सुबह विशेष आयोजन में ही मुक्त आत्मा लामा कर्मपा आते हैं, बाद में उनकी उपस्थिति में ही साधकों को मंत्र-उच्चारण करना होता है।

प्रार्थना-कक्ष के और आगे जाने पर मानेस्ट्री में अलग-अलग तरह के मंदिर हैं जिनमें अलग-अलग प्रकार की प्रार्थनायें उद्देश्य विशेष को लेकर की जाती हैं। एक मंदिर केवल इसलिए ही रखा गया है, जहां पर खास प्रशिक्षित लामा जाकर मृत-आत्माओं को निर्देश देते हैं, ताकि मृत-आत्मायें आगे के जन्म में पुनः मानेस्ट्री में आकर अपना आध्यात्मिक विकास कर सकें। इस विज्ञान को 'बारडो-विद्या' कहते हैं। मानेस्ट्री में ही एक कक्ष में मुक्त आत्मा लामा कर्मपा निवास करते हैं।

लामा-साधकों की आध्यात्मिक साधना

लामा साधकों की दो साधना-पद्धतियां हैं। प्रथम : प्रार्थना-मंत्र-उच्चारण और दूसरी : ध्यान। मानेस्ट्री में कोई भी तब तक प्रवेश नहीं पाता जब तक कि वह पूर्णतः त्याग नहीं करता है। त्याग से अर्थ है : साधना में सहायक वस्त्र पहनना, विशेष प्रकार का भोजन, खास तरह के बाल रखना और बाहरी गतिविधियों से पूर्णतः निवृत्ति लेना। इस त्याग के समय में साधक को साधना-पद्धतियां सिखाई जाती हैं—और जब साधक इन सबसे गुजर

जाता है तभी उसको प्रवेश मिलता है और वह मानेस्ट्री में रह सकता है, अन्यथा नहीं।

साधकों को उनकी क्षमता के अनुसार साधना-प्रणालियां सिखाई जाती हैं और कौन-सी किताबें उन्हें पढ़ना चाहिए, यह निर्देश दिया जाता है। साधक लामा दूसरे व्यक्ति के साक्षात्कार से उसके आभा-मंडल (Aura) द्वारा जानता है कि व्यक्ति सच बोलता है अथवा नहीं, ध्यान-साधना के मार्ग पर है अथवा नहीं, साधना में आगे जा रहा है अथवा नहीं। यह सब वे व्यक्ति के चुम्बकीय क्षेत्र की आभा से जानते हैं।

दूसरी अध्यात्म विद्या जो साधक लामा को सीखना होती है, वह टेलीपैथी है। इसके द्वारा साधक अन्य व्यक्तियों के विचारों को जान लेता है। तीसरी विद्या—दूर दृष्टि (Clairvoyance) की है, जिससे दूर के व्यक्तियों को अपने विचारों से निर्देशित किया जा सके। ये तीन विद्यायें प्रत्येक साधक को सीखना होती हैं और इसके लिए अलग-अलग ध्यान की विधियां हैं। इन सब आध्यात्मिक विद्याओं को तिब्बती लामा गुप्त रखते हैं, ताकि इनका दुरुपयोग न हो सके।

एक बार जो व्यक्ति मानेस्ट्री में प्रविष्ट हो गया, फिर जब तक वह मर नहीं जाता तब तक वह मानेस्ट्री को नहीं छोड़ सकता। एक बार जो व्यक्ति उनके सम्पर्क में आया फिर वह न केवल उस जन्म में वरन् बाद के जन्मों में भी उनके साथ ही रहता है। साधक सिद्ध भी हो जाय तो भी, उनका साथ नहीं छोड़ता। उसकी चेतना को निर्देश देकर बार-बार साधना-परंपरा में उसे आवाहन दिया जाता है और सामान्यतः जब तक साधक, सिद्ध नहीं हो जाता उसे ग्रुप से छुटकारा नहीं मिलता। हां, बुद्धत्व उपलब्ध होने के बाद इस तरह की आत्माओं पर इनका नियंत्रण नहीं रह जाता।

भगवान के पूर्व-जन्म की तिब्बत में सुरक्षित प्रतिमा

मुक्त आत्मा लामा ने कहा : "भगवान के दो जन्म पूर्व की प्रतिमा जब भगवान तिब्बत में दिव्य अवतार थे, तिब्बत के ९९ ईश्वरीय अवतारों के साथ सुरक्षित है। ये प्रतिमायें तिब्बत में सुरक्षित हैं और ऐसे गुप्त स्थान में रखी गई हैं, जिसका ज्ञान केवल उनको है जो ध्यान में गहरे जाते हैं। और भगवान यह जानते हैं।"

इन प्रतिमाओं को स्वर्ण से मढ़ा जाता है। जब कोई अवतार चेतना अपना शरीर छोड़ती है, तो उस शरीर को तिब्बती परंपरा के अनुसार सुर-

क्षित रखते हैं। शरीर को पहले विशेष पद्धति से सुखाया जाता है और बाद में पद्मासन की स्थिति में रखकर उसमें स्वर्ण मढ़ा जाता है। जहां ये मूर्तियां सुरक्षित हैं, उस स्थल पर सामान्य साधक नहीं जाता, केवल विशेष स्थिति को उपलब्ध चेतना ही वहां जा सकती है; कारण कि इन प्रतिमाओं को छूने से ही शक्तिशाली आध्यात्मिक अनुभव होते हैं।"

भगवान ही एक मात्र जीवित विश्व-गुरु

लामा कर्मपा से सुनना मुझे इतना अच्छा लग रहा था कि मैं सुनता ही चला जाना चाहता था। लामा के भाव और उत्साह में ऐसा लगता था जैसे कि उन्हें कुछ खोया हुआ मिल गया हो। उनके संवाद से भी लगता था कि भगवान का और उनका पिछले जन्म का घनिष्ठ संबंध रहा है।

भगवान पर और उनके कार्य पर बोलते हुए लामा कर्मपा ने कहा : "मेरे आशीष तो सदा ही हैं और अपनी असामान्य भाषा के कारण जो सहायता हम दूसरों की नहीं कर सकते थे, भगवान करेंगे।"

दलाई लामा अपने सहयोगी लामाओं सहित जो भारत में आये हैं—उसका अर्थ तिब्बत से चीन के आक्रमण के समय में भागना नहीं है; वरन् तिब्बती साधना-रहस्य और ध्यान की साधनाओं को भारत में बसकर महान् विरासत की परंपरा को कायम रखना है। भूतकाल में भारत से यह सब हमको मिला था और अब हम इसे पुनः भारत को देना चाहते हैं। लेकिन अब हमें ज्ञात हुआ है कि भारत में और विश्व में हमारे कार्य को करने के लिए एक ऐसे व्यक्ति (भगवान) हैं जो इस दुरूह कार्य को कर रहे हैं। हम यह जानकर अति प्रसन्न हैं।" इस तरह का उनका सोचना भगवान के प्रति है।

आगे लामा कर्मपा ने कहा : **"आप लोग बहुत-बहुत भाग्यशाली हैं—उनको पाकर। वे ही एक दिव्य अवतार हैं जो कि विश्व-गुरु होंगे।"**

इस सारे संवाद से वहां पर उपस्थित विदेशी पर्यटकों पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा और विदेशी मित्रों के अतिरिक्त वह अंग्रेज महिला, जो दुभाषिए का कार्य कर रही थी, बंबई आकर भगवान श्री के दर्शन करने की तीव्र आकांक्षा से उत्प्रेरित हो गई।

मैंने एक सुझाव रखा कि हम लोग चाहेंगे कि हिमालय के इस क्षेत्र में एक 'ध्यान-साधना शिविर' रखें। लामा कर्मपा ने शीघ्र कहा : "आप आयें और आप सबका मेरी मानेस्ट्री में स्वागत है। जो भी सहयोग आप चाहेंगे, हम देंगे।"

कार्य-समाप्ति पर भगवान लुप्त हो जायेंगे

लामा कर्मपा ने मुझे यह तो नहीं बताया कि भगवान कौन-सी तिब्बती दिव्य चेतना के अवतार हैं, क्योंकि इसे वे गुप्त रखते हैं; लेकिन एक बात उन्होंने मुझे स्पष्टतः बताई कि : "जैसे ही उनका काम पूरा होगा वे सशरीर लुप्त हो जायेंगे और हम उन्हें खोज नहीं पायेंगे। और यह तिब्बती-कला ही है जिससे लुप्त हुआ जा सकता है।" ऐसा ही लाओत्से के साथ हुआ था—कोई नहीं जानता कि लाओत्से कहां गए। लाओत्से का जब समय आया तो बजाय शरीर छोड़ने के वे लुप्त हो गए।

मैंने मुक्त आत्मा लामा से पूछा कि यह कैसे संभव होगा ? उन्होंने कहा : "हमारा तरंगों (Vibrations) का विज्ञान है, भगवान इस विज्ञान से पूर्णतः भिज्ञ हैं। उन्हें केवल अपनी तरंगों को शांत करना (Calm-down) है और वे लुप्त हो जायेंगे। हम व्यक्तियों को देख पाते हैं, क्योंकि उनकी तरंगें हमारी आंखों तक आकर आकृति बना पाती हैं; और यही तथ्य इस रहस्य के पीछे भी है।' लामा ने यह भी कहा कि : "भगवान ने सारी मनुष्यता के कल्याण के लिए ही अपने अस्तित्व को बांधा हुआ है।"

विश्व भगवान को शीघ्र जानेगा

लामा कर्मपा ने अपनी चर्चा में कहा : "केवल बहुत थोड़े लोग ही जान पायेंगे कि भगवान क्या हैं—विशेषकर वे व्यक्ति ही जान पायेंगे जिन्हें बोधि उपलब्ध होगी। वैसे सारा विश्व उन्हें शीघ्र जानेगा, और भगवान ही एक मात्र पुरुष हैं, जो विश्व-गुरु होंगे।"

यह सब सुनकर मुझे लगा कि लामा कर्मपा बहुत गहरे जाकर देख पाते हैं और पिछले जन्मों में भगवान ने अनेक धर्मों की साधना-परंपराओं में अपने को जो दीक्षित किया है, इसी से विश्व में मनुष्यता के कल्याण के लिए वे निश्चित ही 'विश्व-गुरु' होंगे।

मुझसे लामा कर्मपा ने सेक्स लाइफ के सम्बन्ध में पूछा, क्योंकि मेरी पत्नी-बच्चे साथ थे। मैंने कहा : "भगवान की साधना-पद्धति में कुछ भी बाहर से छोड़ना आवश्यक नहीं है, जो भीतर से सहज में घटित हो जाए, वही श्रेष्ठ आचरण है।

तिब्बती लामा पुनः तिब्बत लौटने की आकांक्षा करते हैं और उनकी धारणा है कि सन् २,००० के बाद वे तिब्बत जा सकेंगे।

प्रश्नकर्त्ता : यह सब आपने जब भगवान को बताया तो उन्होंने क्या कहा ?

स्वामी जी : मैंने भगवान को सब बताया और पूछा : "क्या तिब्बती लामा यहां भारत में हमारी सहायता कर सकेंगे ?" उन्होंने कहा : "नहीं, यह उनके लिए सम्भव नहीं है। उनकी साधना-पद्धतियां बहुत जटिल एवं कठोर हैं आधुनिक युग के लिए, साथ ही उनकी आध्यात्मिक साधना बहुत लम्बी है और समय व्यक्ति के पास थोड़ा है। इस युग में शीघ्र सहायता की जरूरत है और इसी से बड़ी संख्या में मनुष्यों को तिब्बती लामा सहायता नहीं पहुंचा सकते हैं।"

यह सब जानकर और लामा कर्मपा की घोषणा से यह निश्चित है कि भगवान और उनकी साधना-पद्धति ही विश्व की बड़ी मनुष्यता को आध्यात्मिक लाभ दे सकती है।

यद्यपि भगवान ने यह सीधा नहीं बताया कि वे लामा कर्मपा से पिछले जन्म से परिचित हैं, लेकिन उनके भाव से लगता है कि वे जानते हैं। तभी तो उन्होंने सस्मित कहा : "यह बहुत अच्छा हुआ कि आप वहां गए।"

मेरे साथ यह जो लामा कर्मपा की भेंट होना और मेरा वहां पहुंचना, खुद भी अपने में एक रहस्य है और इस सबसे मैं बहुत आनन्दित हूं।

● मूल अंग्रेजी से भावानुवाद : *अरविन्द कुमार*

●●●

समर्पण

(एक मुक्तक)

खुद को 'तेरे' हवाले किया जबसे है
कुछ खबर ही नहीं मैं कहां जा रहा !
अब न सुख है न दुःख है मुझे क्या मिला—
एक आनंद-नद में बहा जा रहा !!

—*'आकुल' राजेन्द्र*

तुलसी मानस प्रकाशन की उपलब्धियां

हरिकिशनदास अग्रवाल द्वारा लिखित

संक्षिप्तरूप में आधुनिक ढंग से आध्यात्मिकता की ओर प्रेरित करने वाली जीवनोपयोगी पुस्तकें

१. **संसार का सार (हिन्दी में)**– आधुनिक खेलों, वैज्ञानिकों साधनों, जीव-जंतुओं, वनस्पतियों के द्वारा आध्यात्म शिक्षा। ३–००

२. **ज्ञान साधना**–लोनावाला शिविर में पधारे हुए महापुरुषों के ज्ञान साधना के प्रति संकेत। २–००

३. **विज्ञान से ज्ञान**– एक्स-रे इत्यादि आधुनिक उदाहरणों को लेकर आध्यात्मिकविद्या नवयुवकों तक पहुंचाने का सफल प्रयास। १–००

४. **वेदान्त-नवनीत**– सन् १९६४ के अमृतसर के वेदान्त सम्मेलन में पधारे महात्माओं के प्रवचनों का सार। १–५०

५. **वेदान्त का सरल बोध**–वेदान्त के क्लिष्ट ग्रंथों के सिद्धांत बड़े ही सरल उदाहरणों में। २–००

६. **आध्यात्मिक पिक्टोरियल (हिन्दी व अंग्रेजी)**– ज्ञान की गंभीर बातों का सूत्र तथा चित्र द्वारा प्रस्तुत। ४–००

७. **आध्यात्मिक डायरी**—१९७२– सचित्र और दार्शनिक सूत्रों से परिपूर्ण दैनंदिनी। ७–००

८. **आध्यात्मिक चित्रावली (हिंदी-इंग्लिश) पाकेट बुक**– २५० पृष्ठों में रंगीन ब्लैक एण्ड ह्वाइट चित्र इंग्लिश तथा हिन्दी में सूत्रों सहित सर्वसाधारण के लिए आध्यात्मिक ज्ञान। ६–००

९. **मुमुक्षु**–आधुनिक मनोरंजक आध्यात्मिक उपन्यास। ५–००

१०. **मन की शांति (पद्य)**– अंग्रेजी मूल रचना 'पीस ऑफ माइंड' का हिन्दी अनुवाद। ४–००

११. **हमारी परंपरा**– क्रिकेट और ताश के पत्ते आदि दृष्टांतों द्वारा आध्यात्म की नवयुवकों तक पहुंच। २–००

१२. **आराम सुख शांति और आनंद**– जैसा नाम तैसा गुण। ०–५०

१३. Ease Peace Happiness and Bliss (English) 0–25
१४. **अपनी ओर इशारा**– अपनी ओर आने के सूत्र रूप इशारे । १–००
१५. **व्यवहारिक जीवन और परमात्मा**– व्यवहार परमात्ममिलन में बाधक नहीं, इसकी स्पष्टता । १–००
१६. **श्मशान यात्रा**– जीवन यात्रा का अंतिम चरण । ०–५०
१७. **मेरे १०८ गुरु**– क्षण-क्षण व कण-कण से नूतन ज्ञान । ३–००
१८. **सजगता**–पल-पल अविरल वर्तमान में सजग जीवन । १–००
१९. **अविरोध-निरोध और स्वबोध**–अविरोध से मन का निरोध और निरुद्ध मन में स्वबोध । २–००
२०. **वेदान्त का वैज्ञानिक मनन**–वैज्ञानिक दृष्टान्तों द्वारा वेदान्त का मनन । २–००
२१. **चिंता और निश्चिंतता**– चिन्ता से पार उतरने के सरल सूत्र । २–००
२२. **मन के पार**– विकट सामाजिक धार्मिक और आध्यात्मिक प्रश्नों पर आचार्य श्री रजनीश जी के उत्तर । १–००
२३. **घर-घर की समस्या**– घरेलू दैनिक विकट समस्याओं का समाधान । २–००
२४. Peace of Mind-अंग्रेजी में सूत्र रूप आध्यात्मिक सरल ज्ञान । ५–००
२५. Quieter Moments - मौन के क्षणों में लिखे सूत्र रूप अंग्रेजी-सूक्त । २–००
२६. **मनन योग्य बातें**– १–००
२७. **जाग्रत-जाग्रत**–जाग्रत जीवन । ०–५०
२८. **जाग रे जाग**–स्वामी निर्मल जी के रहस्यमयी प्रवचनों का संकलन– ४–००
२९. **उनके सान्निध्य में**– स्वामी निर्मल जी के अनुभवपूर्ण रहस्य । २–००
३०. **'मनन'** आध्यात्मिक मासिक–मनन करने योग्य पत्र, वार्षिक शुल्क ४–००

ग्राहक आर्डर देने से पहले अपने शहर के पुस्तक विक्रेताओं से पता कर लें
ग्राहक एवं एजेन्ट्स, पत्र व्यवहार करें

तुलसी – मानस – प्रकाशन

अन्तर्गत विभाग केबल मार्केटिंग कम्पनी
गुप्ता मिल्स स्टेट, रे रोड, बम्बई–१०

हमेशा स्वतन्त्रता है, लेकिन जो लोग मरने के मुकाबले में गुलामी को चुन लेते हैं, वे ही केवल गुलाम हो सकते हैं।

● हम मृत्यु से इतने भयभीत लोग हैं कि हम कैसा भी दीन-हीन, दलित और पैरों में पड़ा हुआ जीवन स्वीकार कर सकते हैं, लेकिन मृत्यु को वरण करने की हिम्मत हमने बहुत पहले खो दी है। हम इसलिए नहीं नीचे गिर गए कि हम हजारों साल गुलाम रहे, बल्कि हम नीचे गिरे, इसलिए हमें हजार साल गुलाम रहना पड़ा। क्या आज भी हमारी कोई ऊंचाई उठ गई है? कोई स्वतन्त्र होने से ऊंचा नहीं उठ जाता है। हम स्वतन्त्र नहीं हुए, हमारी सारी बीमारियां, कमजोरियां स्वतन्त्र हो गई हैं। और देश गुलामी की हालत से भी बदतर हालतों में पिछले बीस वर्षों में नीचे उतर गया है।

● क्रांति की दृष्टि का अर्थ है कि हम अनिश्चित के लिए निश्चित को छोड़ने का साहस जुटाते हैं—हम अज्ञात के लिए ज्ञात से कदम उठा लेने का साहस जुटाते हैं—हम जो नहीं हैं उसके लिए उसको मिटाने का साहस जुटाते हैं—जो है। जो था, उससे उसमें जाने का साहस जो हो सकता है और नहीं भी हो सकता है। यही साहस किसी जाति को जवान बनाता है, अन्यथा जो जाति यह साहस खो देती है वह बूढ़ी हो जाती है।

● सुरक्षा का जितना ज्यादा मोह होता है, क्रांति की संभावना उतनी ही कम होती है। एक नदी हिमालय से निकली है और प्रतिपल पुराना किनारा छोड़ती है और अज्ञात रास्तों पर उस सागर की खोज पर चलती है, जिसका उसे कोई पता नहीं होता कि वह कहां है? होगा भी या नहीं होगा? नदी की जो यह दृष्टि है, वह क्रांति की जीवन-दृष्टि है। इसके विपरीत एक गतिहीन एक अर्थ मे सुरक्षित एक सरोवर है, उसमें कोई जीवंतता नहीं होती, सब कुछ सदा वही जो कल था, परसों भी था। उसके जीने का एक ही अर्थ है कि दिन-प्रतिदिन सड़ता ही जायगा और ऐसी ही स्थिति भारत की हो गई है।

संचयन : *'आकुल' राजेन्द्र*

• साधना शिविर •

भगवान के आशीष की अमृत-वर्षा
साधना की अतल गहराइयों में उतरने हेतु
माऊंट-आबू में भगवान रजनीश के सान्निध्य
में 'ध्यान-साधना-शिविर' का आयोजन

दिनांक : १३ अक्टूबर से २१ अक्टूबर ७२ तक

संपर्क सूत्र : *स्वामी सत्य बोधिसत्व*, जीवन जाग्रति केन्द्र,
आश्रम रोड, भवानी चेम्बर्स, अहमदाबाद – ६

भगवान रजनीश जन्म–दिवस विशेषांक

सुविज्ञ-प्रेमियों, साधना-पथ के राहियों और संन्यासी मित्रों से सस्नेह निवेदन है कि भगवान रजनीश जन्म–दिवस विशेषांक के लिए भगवान के प्रति अपने काव्य रूपी भाव-सुमन, संस्मरण, अप्रकाशित–पत्र एवं अन्य कोई घटना–प्रसंग जो आपके जीवन को भगवान के साधना-पथ से आलोकित कर गये हों, 'युक्रांद' हेतु सादर आमंत्रित हैं।

रचनायें पृष्ठ के एक ओर, सुस्पष्ट लिखावट में १५ अक्टूबर, ७२ तक भेजने की कृपा करें।

निवेदक : स्वामी धर्म सरस्वती
व्यवस्थापक : *युक्रांद, ७९०, राइट-टाउन, जबलपुर*

युक्रान्द

अगस्त १९७२